पूर्वांचल खेती

वर्ष : 32 सितम्बर 2022 अंक : 09

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वांचल खेती

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वांचल खेती

वर्ष 32 | सितम्बर 2022 | अंक 09

संरक्षक

डॉ. बिजेन्द्र सिंह

कुलपति

प्रधान सम्पादक

प्रो. ए. पी. राव

निदेशक प्रसार

तकनीकी सम्पादक

डॉ. आर. आर. सिंह

प्राध्यापक, मृदा विज्ञान

मो. नं. 9450938866

सम्पादक मण्डल

डॉ. वी. पी. चौधरी

सहायक प्राध्यापक, पादप रोग

डॉ. पंकज कुमार

सहायक प्राध्यापक, कीट विज्ञान

डॉ. अनिल कुमार

सहायक प्राध्यापक, प्रक्षेत्र प्रबन्ध

सम्पादक

उमेश पाठक

मोबाइल नं. 9415720306

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखक के निजी हैं। प्रकाशक/सम्पादक इसके लिए उत्तरदायी नहीं है

विषय सूची

आलू की वैज्ञानिक खेती 01
ए.पी. राव एवं पंकज कुमार

फूल गोभी की वैज्ञानिक खेती 04
एस.के. वर्मा एवं समीक्षा

धान का हल्दिया (फाल्स स्मट) रोग पूर्वांचल के लिये उभरता खतरा 06
प्रदीप कुमार एवं ओम प्रकाश

फसल अवशेष प्रबंध 08
राम लखन सिंह एवं मनीष कुमार मौर्य

वर्ष भर कमाई का स्रोत : नीबूवर्गीय फल 09
रवि प्रताप एवं धर्मेन्द्र बहादुर सिंहर

धनिया की उन्नत खेती से अधिकाधिक लाभ 12
आलोक कुमार एवं अग्निवेश यादव

सहजन उत्पादन की वैज्ञानिक तकनीक 14
अखिल कुमार चौधरी एवं आलोक कुमार

मृदा में फसल अवशेष प्रबन्धन का प्रभाव 15
नन्दन सिंह एवं वी.पी. चौधरी

तिलहनी फसलों के खरपतवार एवं उनकी रोकथाम 17
हेमन्त कुमार सिंह एवं राहुल सिंह रघुवंशी

खरीफ की दलहनी फसलों में 'कीट रोग प्रबंधन' 19
संदीप कुमार एवं संजीत कुमार

शिशुओ के लिए पूरक आहार 22
सरिता श्रीवास्तव एवं सुमन प्रसाद मौर्य

दुधारू पशुओं में ब्यांत से सम्बन्धित प्रमुख समस्यायें एवं निदान 23
डी0के0 श्रीवास्तव एवं एस0एन0 सिंह

सितम्बर माह में किसान भाई क्या करें 27

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के 27

बॉक्स सूचनाएं

अमूल्य सुझाव 16

प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

विश्वविद्यालय के कार्य क्षेत्र में स्थापित विभिन्न कृषि विज्ञान/ज्ञान केन्द्र एवं अनुसंधान केन्द्र

क्र. सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	वरिष्ठ वैज्ञानिक/अध्यक्ष/प्रभारी अधिकारी	दूरभाष कार्यालय	मोबाइल
1.	वाराणसी	डॉ. नरेन्द्र रघुवंशी	05542–248019	9415687643
2.	बस्ती	डॉ. एस. एन. सिंह	05498–258201	9450547719
3	बलिया	श्रीमती प्रेमलता श्रीवास्तव	–	9918175154
4.	फैजाबाद	डॉ. शशिकान्त यादव	05278–254522	9415188020
5.	मऊ	डॉ. एल. सी. वर्मा	0547–2536240	7376163318
6.	चंदौली	डॉ. एस. पी. सिंह	0541–2260595	9458362153
7.	बहराइच	डॉ. विनायक शाही	05252–236650	8755011086
8.	गोरखपुर	डॉ. सतीश कुमार तोमर	–	9415155518
9.	आज़मगढ़	डॉ. डी.के. सिंह	–	9456137020
10.	बाराबंकी	डॉ. शैलेश कुमार सिंह	–	9455501727
11.	महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	–	7839325836
12.	जौनपुर	डॉ. सुरेश कुमार कनौजिया	–	9984369526
13.	सिद्धार्थनगर	डॉ. ओम प्रकाश	05541–241047	9452489954
14.	सोनभद्र	डॉ. पी. के. सिंह	–	9415450175
15.	बलरामपुर	डॉ. एस. के. वर्मा	–	9450885913
16.	अम्बेडकरनगर	डॉ. रामजीत	–	9918622745
17.	संतकबीरनगर	डॉ. अरविन्द सिंह	–	9415039117
18.	अमेठी	डॉ. रतन कुमार आनन्द	–	9838952621
19.	बहराइच (नानपारा)	डॉ. के. एम. सिंह	–	9307015439
20.	मनकापुर–गोण्डा	डॉ. मिथिलेश पाण्डे	–	9415665138
21.	बरासिन–सुल्तानपुर	डॉ. वी.पी. सिंह	–	9839420165
22.	अमिहित–जौनपुर	डॉ. संजीत कुमार	–	9837839411
23.	गाजीपुर	डॉ. आर. सी. वर्मा	–	9411320383
24.	श्रावस्ती	डॉ. आर.पी.एस. रघुवंशी	–	9415533739
25.	आजमगढ़ द्वितीय	डॉ. डी.के. सिंह	–	9456137020

विश्वविद्यालय के कृषि ज्ञान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाष कार्यालय
1.	अमेठी	डॉ. ए. पी. राव.	9415720376	–
2.	गोण्डा	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–
3.	देवरिया	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–
4.	गाजीपुर	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–

विश्वविद्यालय के अनुसंधान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि अनुसंधान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाष कार्यालय
1.	मसौधा, फैजाबाद	डॉ. डी. के. द्विवेदी	7706884188	05278–254153
2.	तिसुही, मिर्जापुर	डॉ. पी. के. सिंह	9415450175	05442–284263
3.	बसुली, महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	9451430507	–
4.	घाघरा घाट, बहराइच	डॉ. नितेन्द्र प्रकाश	9026289336	0525–235205
5.	बड़ा बाग, गाजीपुर	डॉ. सी. पी. सिंह	9628631637	–
6.	बहराइच	डॉ. एस. के. सिंह	8787289358	0548–223690

प्रो. ए. पी. राव
निदेशक प्रसार

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या-224 229 (उ.प्र.), भारत
टेलीफैक्स : 05270-262821
फैक्स : 05270-262821

सम्पादकीय

कृषि आधारित आय में वृद्धि की दृष्टि से कृषि विविधीकरण तकनीकी की महत्वपूर्ण भूमिका है। छोटे, सामान्य व बड़े किसान सभी को कृषि आय में वृद्धि के लिये चन्द फसलों की खेती से हटकर खाद्यान्न, सब्जी, फल व फूल की खेती को अपनी कृषि क्रिया में शामिल करना ही चाहिये। हमारे किसान भाईयों के खाद्यान्न के साथ–साथ सब्जी व फल की खेती की वैज्ञानिक तकनीक उन तक पहुंचाने का प्रयास निरन्तर किया जाता रहा है। इसी क्रम में पूर्वांचल खेती पत्रिका के इस अंक में विभिन्न फसलों की वैज्ञानिक कृषि पद्धति से लेकर फसल सुरक्षा तक नवीनतम जानकारी पहुंचाने की दृष्टि से वैज्ञानिक लेख प्रकाशित किये जा रहे हैं। आशा है पत्रिका का यह अंक कृषक भाइयों के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

(ए.पी. राव)

आलू की वैज्ञानिक खेती

ए.पी. राव* एवं पंकज कुमार**

आलू विश्व की सबसे महत्वपूर्ण गैर–अनाज, उच्च उपज वाली बागवानी खाद्य फसलों में से एक है तथा चावल और गेहूं के बाद दुनिया में तीसरी सबसे महत्वपूर्ण खाद्य फसल है। आलू, जिसे सब्जियों का राजा भी कहा जाता है, का भारत में प्रमुख स्थान है। यद्यपि इसका उत्पादन अन्य सब्जियों की अपेक्षा बहुत अधिक किया जा रहा है, फिर भी अन्य विकसित राष्ट्रों की तुलना में इसका उत्पादन कम है। देश में 22.47 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में आलू की खेती की जा रही है, जिससे 531.14 लाख टन उपज प्राप्त होती है। आलू की उत्पादकता राष्ट्रीय स्तर पर 22.8 टन प्रति हेक्टेयर है, जबकि उत्तर प्रदेश में 5.5 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल में आलू की खेती होती है, जिससे 135.7 लाख टन उत्पादन प्राप्त होता है। प्रदेश की उत्पादकता 24.4 टन प्रति हेक्टेयर है।

जलवायु

आलू की खेती ठण्डे मौसम में की जाती है। आलू के उचित विकास के लिए कम आर्द्रता एवं चमकीली धूप वाले दिनों की आवश्यकता होती है। जमाव के लिए 250 सेंटीग्रेड एवं विकास के लिए 17 से 190 सेंटीग्रेड तापमान आवश्यक है। दिन का तापमान 20–240 सेंटीग्रेड एवं रात्रि का 12–140 सेंटीग्रेड कन्द निर्माण के लिए सर्वोत्तम होता है। 300 सेंटीग्रेड से अधिक तापमान पर कन्द निर्माण पूर्णतः रुक जाता है।

मृदा

आलू विभिन्न प्रकार की मृदाओं में पैदा की जा सकती है। लेकिन उचित जल निकास वाली बलुई दोमट से दोमट जीवांशयुक्त जिसका पी.एच. 5.5 से 7.5 तक हो, आलू की खेती के लिए अति उपयुक्त है। बहुत अंधिक एवं बहुत कम पी.एच. मान वाली भूमि में पौधों के विकास के साथ–साथ पोषक तत्वों की उपलब्धता भी बाधित होती है।

बुवाई का समय

बीज दर एवं बीज का चयनः

पूर्वी उत्तर प्रदेश में आलू की बुवाई हेतु 15 अक्टूबर से 15 नवम्बर तक का समय सबसे उपयुक्त होता है। एक हेक्टेयर क्षेत्रफल के लिए 30–35 कुन्तल बीज की आवश्यकता होती है। बीज के लिए प्रयुक्त होने वाली कन्दों का वजन 30–40 ग्राम होना चाहिए। आलू का बीज विश्वसनीय संस्थानों जैसे–उद्यान विभाग से प्राप्त कर स्वस्थ बीज का ही प्रयोग करके अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है।

प्रजातियाँ

60–75 दिन में तैयार होने वाली प्रजातियां

क्रम सं.	प्रजाति का नाम	उपज (कु0/हे0)
1.	कुफरी पुखराज	300–350
2.	कुफरी सूर्या	250–300
3.	कुफरी ख्याति	250–300
4.	कुफरी अशोक	250–300
5.	कुफरी चन्द्रमुखी	200–250

90–110 दिन में तैयार होने वाली प्रजातियां

क्रम सं.	प्रजाति का नाम	उपज (कु0/हे0)
1.	कुफरी पुखराज	350–400
2.	कुफरी सिन्दूरी	300–400
3.	कुफरी आनन्द	300–350
4.	कुफरी बादशाह	300–350
5.	कुफरी अरूण	300–350
6.	कुफरी सदाबहार	300–350
7.	कुफरी लालिमा	250–300
8.	कुफरी सतलज	250–300
9.	कुफरी बहार	250–300

100–120 दिन में तैयार होने वाली प्रसंस्करण हेतु प्रजातियां

क्रम सं.	प्रजाति का नाम	उपज (कु0/हे0)
1.	कुफरी सूर्या	300–350
2.	कुफरी चिप्सोना–1	300–350
3.	कुफरी चिप्सोना–3	300–350
4.	कुफरी चिप्सोना–4	300–350
5.	कुफरी फ्राईसोना	300–350

खाद एवं उर्वरक

आलू की खेती में खाद एवं उर्वरकों का विशेष महत्व है। इनका संतुलित उपयोग नितान्त आवश्यक है।

*निदेशक प्रसार **विषय वस्तु विशेषज्ञ, प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्व विद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए बुवाई के 3–4 सप्ताह पूर्व 25–30 टन सड़ी हुई गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर क्षेत्रफल के अनुसार प्रयोग करना चाहिए। जमीन की किस्म एवं पोषक तत्वों की उपलब्धता के आधार पर उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए। विश्वविद्यालय इस क्षेत्र के लिए 150 किलोग्राम नाइट्रोजन, 100 किलोग्राम फास्फोरस एवं 120 किलोग्राम पोटाश उर्वरक डालने की संस्तुति करता है। बुवाई के समय आधी नाइट्रोजन मात्रा के साथ फास्फोरस एवं पोटाश उर्वरकों की पूरी मात्रा का प्रयोग करना चाहिए, शेष आधी नाइट्रोजन की मात्रा बुवाई के लगभग एक माह बाद आलू की मिट्टी चढ़ाते समय प्रयोग करना उपयुक्त होता है।

बुवाई की विधि

बुवाई के लिए मेड़ी विधि सबसे उत्तम है। इस विधि में खेत की तैयारी के बाद बुवाई कतार से कतार 60 सेमी0, कन्द से कन्द 20 सेमी० की दूरी पर करना चाहिए। इसके बाद कुदाल व फावड़े से आलू के कन्दों को ढक देना चाहिए।

खरपतवार नियन्त्रण

खरपतवार के प्रभावी नियन्त्रण हेतु मेट्रीव्युजिन नामक खरपतवारनाशी की 0.75 किग्रा0 मात्रा 800 लीटर पानी में घोल कर प्रति हेक्टेयर की दर से आलू के अंकुरण के पूर्व अथवा आलू के लगभग 10 प्रतिशत जमाव हो जाने पर छिड़काव करें।

मेड़ी चढ़ाना

बुवाई के 25–30 दिन बाद कुदाल से मेड़ियों के बीच गुड़ाई करें, साथ ही साथ मेड़ियों को भी यथा सम्भव गिरा लें। इसके बाद आधी नाइट्रोजन उर्वरक की मात्रा का छिड़काव करके मेडी चढ़ा दें तथा दूसरे दिन हल्की सिंचाई कर दें।

सिंचाइ

आलू की फसल का 10–15 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए, ध्यान रहे कि पानी आलू की मेड़ी की आधी उंचाई से ऊपर न जाने पाये।

खुदाई एवं उपज

आलू की खुदाई प्रजाति के अनुसार 60–75, 90–110 एवं 100–120 दिन पर की जाती है। खुदाई के 5 दिन पूर्व आलू की फसल में सिंचाई बन्द कर देना चाहिए। यदि बीज के लिए फसल लगाई गयी हो तो खुदाई के 40–45 दिन पहले पौधों को काट देना चाहिए। अगेती फसल से अच्छा मूल्य प्राप्त करने के लिए बुआई के 60–70 दिनों के उपरान्त कच्ची फसल की अवस्था में आलू की खुदाई की जा सकती है। फसल पकने पर आलू खुदाई का उत्तम समय मध्य फरवरी से मार्च द्वितीय सप्ताह तक है। 300 सेंटीग्रेड तापमान आने से पूर्व ही खुदाई पूर्ण कर लेना चाहिए।

भण्डारण

आलू की खुदाई के बाद उत्पाद को अंधेरे एवं हवादार स्थान पर 10–15 दिन बाद रखें। उसके उपरान्त जूट के 50 किग्रा0 क्षमता वाले हवादार बोरों में भर करके मार्च के अन्त तक शीतगृह में भण्डारित कर देना चाहिए। यदि आलू को बाजार में शीघ्र भेजना है तो शीतगृह में भण्डारित करने की आवश्यकता नहीं है। इसके लिए कच्चे हवादार मकानों, छायादार स्थानों में आलू को स्टोर किया जा सकता है।

प्रमुख रोग एवं उनका नियन्त्रण

आलू का पिछेती झुलसा रोग

इस रोग का कारक फाइटोप्थोरा इनफेस्टान्स नामक फफूँद है। यह रोग पौधों के पत्ते, डंठल और कन्द सभी को लगता है। आरम्भिक लक्षण पत्तियों पर छोटे हल्के पीले अनियमित धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं जो शीघ्र ही बढ़कर बडे, गीले दिखने वाले धब्बे बनाते हैं। बाद में पत्तियों के निचले भाग पर इन धब्बों के चारों ओर अंगूठीनुमा सफेद फफूँद आ जाते हैं। आरम्भ में डंठलों पर भी भूरे रंग के धब्बे बनते हैं जो बाद में लम्बाई में बढ़कर डंढल के चारों ओर फैल जाते हैं। इस रोग के कारण कन्दों पर छिछला लाल भूरे रंग का शुष्क गलन पाया जाता है। ग्रसित कन्द का गूदा बदरंग व जली हुई शर्करा की महक लिये होता है। इस रोग से बचाव के लिए पिछेती झुलसा अवरोधी प्रजातियों जैसे कुफरी बादशाह, कुफरी सतलज, कूफरी पुष्कर व कुफरी आनन्द आदि का चयन करना चाहिए। रोग दिखाई देने की अवस्था में मैनकोजेब फफूँदीनाशी के 0.25 प्रतिशत घोल (2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए। इस छिड़काव के 10 दिन के अन्तराल पर दूसरा छिड़काव रिडोमिल एमजेड / करजेट एम8 / सेक्टिंन 60 डब्लूपी

में से किसी एक दवा का 0.25 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए। अगर आवश्यक हो तो तीसरा छिड़काव 0.25 प्रतिशत मैन्कोजेब का दूसरे छिड़काव के 12–15 दिन के अन्तराल पर करना चाहिए।

आलू का अगेती झुलसा रोग

इस रोग का कारक अल्टरनेरिया सोलेनाई नामक फफूँद है। यह मुख्य रूप से आलू की पत्तियों एवं कन्दों को नुकसान पहुंचाता है। शुरू में इस रोग का लक्षण निचली व पुरानी पत्तियों पर 1–2 मिलीमीटर आकार के गोल अण्डाकार भूरे धब्बों के रूप में दिखाई देता है। बाद में यह धब्बे आकार में बड़े होकर कोणीय रूप धारण कर लेते हैं। कन्दों पर इसके लक्षण भूरे गोल या अनियमित आकार वाले धंसे हुए धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं। रोगी कन्द का गूदा सूखा–भूरा कार्क जैसा हो जाता है। इस रोग का नियन्त्रण पिछेती झुलसा जैसा ही है।

काली रूसी व सामान्य धब्बा रोग

काली रूसी रोग का कारक राइजेक्टोनिया सोलेनाई नामक फफूंद है। इस रोग से ग्रसित कन्दों की सतह पर गहरे भूरे से काले रंग वाले असमान व पेचदार पिण्ड होते हैं। ये अनियमित पिण्ड धोने से आसानी से नहीं छूटते। इनका आकार सुई की नोक से लेकर मटर के दाने के समान हो सकता है। सामान्य धब्बा का कारक स्ट्रेप्टोमाइसिस प्रजाति का बैक्टीरिया है। इस रोग के लक्षण आलू के कन्द पर चेचक के धब्बे की तरह निशान बन जाता है। कन्दों पर खुरदरी कार्क वाली फुन्सियां बनकर 3–4 मिलीमीटर के गहरे गड्ढे बना देती हैं। इन दोनों रोगों के नियन्त्रण हेतु आलू के बीज को 3 प्रतिशत बोरिक एसिड के घोल में 20–30 मिनट तक भिगोना चाहिए अथवा इसी घोल का छिड़काव कन्दों पर कर देना चाहिए। रोग की अधिकता होने पर उस खेत में आलू की खेती न करें।

पत्ती मुड़न रोग

इस रोग का कारक फ्लोयम निकरोसिस नामक विषाणु है। इस रोग से ग्रसित पौधे की पत्तियां चमड़े की तरह कड़ी हो जाती है तथा पौधे बौने रह जाते हैं। निचली पत्तियां ऊपर की तरफ मुड़नी शुरू हो जाती हैं और बाद में पीली पड़कर भरुभुरी हो जाती हैं। कुछ किस्मों के पौधे की पत्तियों के किनारे तथा निचली सतह पर लाल व बैगनी रंग आ जाता है। इस रोग के नियंत्रण के लिए सदैव रोग मुक्त स्वस्थ बीज का ही प्रयोग करें। रोगी पौधे को जड़ कन्दों सहित निकाल कर नष्ट कर दें। फसल पर माहू कीट की बढ़वार दैहिक कीटनाशकों के प्रयोग से रोकें।

चित्ती रोग

इस क्षेत्र में मुख्यतः मृदु चित्ती एवं भीषण चित्ती रोग आते हैं मृदु चित्ती पी०वी0ए0 विषाणु से एवं भीषण चित्ती पी0वी0वाई, पी0वी0एक्स० आदि विषाणुओं से फैलती है। इस रोग का लक्षण नई पत्तियों पर दिखाई देता है। मृदु व उग्र चित्ती में केवल नई पत्ती या ऊपरी पत्तियों पर अनियमित, साधारण हरे व हल्की पीली चित्ती दिखती है। कम ठण्डे व मन्द मौसम में चित्ती रोग काफी उग्र होता है, जिसके कारण पत्तियों पर झुर्रियों के साथ–साथ अन्तर सिराओं में पीलापन आ जाता है। इसके नियन्त्रण के लिए भोज्य आलू के खेतों में प्रयोग के बाद औजारों को 3 प्रतिशत ट्राईसोडियम फारस्फेट या 1 प्रतिशत कैल्शियम हाइपोक्लोराइट के घोल में 10 मिनट तक डुबोकर धोने के बाद बीज का खेतों में उपयोग करें। सदैव विश्वसनीय स्रोत से प्राप्त कर रोगरहित बीजों का ही इस्तेमाल करें । जहां तक सम्भव हो रोगरोधी किस्मों का चयन करें। माहू की संख्या क्रान्तिक सीमा पर पहुंचते ही डंठलों की कटाई कर दें। फसल काल में खेत का कम से कम दो बार निरीक्षण कर रोगी पौधों को कन्द सहित उखाड़ दें।

प्रमुख कीट

माहू या चेपा कीट

माइजस परसिकी व एफिस गासिपी नामक माहू आलू के फसल पर वैसे तो कीट–मकोड़ों की तरह नुकसान नहीं करते लेकिन यह रोगमुक्त बीज उत्पादन पर रोक लगाने में अहम भूमिका निभाते हैं, क्योंकि पत्ती मोड़क (पी0एल0आर०बी0) व वाई वाइरस (पी0बी0वाई0) के मुख्य वाहकों के रूप में कार्य करते हैं तथा इन वाइरस रोगों से फसल को 40–85 प्रतिशत तक का नुकसान होता है। प्रति 400 यौगिक पत्तियों पर माहू की संख्या 20 से ऊपर नहीं होने देना चाहिए। इसके नियन्त्रण के लिए किसी उपयुक्त दैहिक कीटनाशक जैसे डाइमिथेएट 25 ई.सी. का 0.03 प्रतिशत घोल 10–15 दिनों के अन्तराल पर छिड़क देना चाहिए।

फूल गोभी की वैज्ञानिक खेती

एस.के. वर्मा* एवं समीक्षा**

गोभी वर्गीय सब्जियों में फूलगोभी का सबसे महत्वपूर्ण स्थान है। इसकी खेती मुख्य रूप से श्वेत, अविकसित व गठे हुए पुष्पपुंज के उत्पादन हेतु की जाती है। इसका उपयोग सब्जी, सूप, अंचार, सलाद, बिरियानी इत्यादि बनाने में किया जाता है। साथ ही यह पाचनशक्ति को बढ़ाने में अत्यंत लाभदायक है। यह प्रोटीन, कैल्शियम और विटामिन ए तथा सी का भी अच्छा श्रोत है।

जलवायु

शीतल तथा नम जलवायु उपयुक्त मानी जाती है। अधिक ठंडा और पाला के होने से फूलों को अधिक नुकसान होता है। अच्छी फसल के लिए 15–20 डिग्री तापमान सर्वोत्तम होता है। शाकीय वृद्धि के समय तापमान अनुकूल से कम रहने पर फूलों का आकार छोटा हो जाता है।

भूमि एवं इसकी तैयारी

इसकी खेती के लिए अच्छी जल निकास वाली जीवांश युक्त गहरी दोमट या बलुई दोमट भूमि अच्छी होती है। फूलगोभी की अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए खेत की मिट्टी अच्छी प्रकार से तैयार करनी चाहिए। इसके लिए 3–4 जुताईयां करके पाटा लगा देना चाहिए।

उन्नत किस्में

1. अगेती किस्में (0–27 डिग्री सेन्टीग्रेड)
अर्ली कुंआरी, पूसा कतिकी, पूसा दीपाली
2. मध्यमी किस्में (16–20 डिग्री सेन्टीग्रेड)
पंत सुभ्रा, पूसा सुभ्रा, पूसा स्नोवाल के–1, सैगनी
3. पिछेती किस्में (10–16 डिग्री सेन्टीग्रेड)
पूसा स्नोवाल–1, पूसा स्नोवाल–2, पूसा स्नोवाल–16।
4. संकर प्रजातियां
एम–55, मधुबनी, रेमी, हेमा, समर किंग।

खाद एवं उर्वरक

एक हेक्टेयर खेत में 20–25 टन सड़ी हुई गोवर की खाद या कम्पोस्ट खाद अंतिम जुताई के समय खेत में अच्छी तरह मिला देना चाहिए। इसके अलावा 120 किग्रा नाइट्रोजन, 60 किग्रा फास्फोरस व 40 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा एवं फास्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा अंतिम जुताई या रोपण से पूर्व खेत में अच्छी प्रकार मिला देना चाहिए तथा नत्रजन की शेष आधी मात्रा दो बराबर भागों में बांटकर खड़ी फसल में 30 व 45 दिन बाद टाप ड्रेसिंग के रूप में देनी चाहिए।

बीजदर एवं बुआई का समय

अगेती किस्मों की रोपाई हेतु बीजदर 600–700 ग्राम तथा मध्यम एवं पिछेती किस्मों की बीजदर 350–400 ग्राम प्रति हेक्टेयर है। अगेती किस्मों की रोपाई हेतु नर्सरी में बीज की बुआई अगस्त के अंतिम सप्ताह से 15 सितम्बर तक कर देना चाहिए। मध्यम और पिछेती किस्मों की बुआई सितम्बर के मध्य से पूरे अक्टूबर तक कर देना चाहिए।

पौधशाला की तैयारी एवं बीज की बुवाई

एक हेक्टेयर की फसल लगाने के लिए 3 मीटर लम्बी, 4 मीटर चौड़ी व 20–25 सेंमी0 ऊपर उठी हुई 25 क्यारियां तैयार कर लें। क्यारियां तैयार करने के बाद थिरम या कैप्टान 5 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोलकर क्यारी को नम कर दें। बीज शोधन थीरम या कैप्टाफ या कैप्टान द्वारा 2.5 ग्राम मात्रा प्रति कि0ग्रा0 बीज की दर से करके इन क्यारियों में लगभग 5 से0मी0 की गहराई पर बुवाई इस प्रकार करें कि एक जगह पर एक ही बीज पड़े। बीज को सड़ी हुई गोबर की भुरभुरी खाद एवं बालू की समान मात्रा मिलाकर ढंक दें और फुहारे से आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें। इस प्रकार लगभग 4 सप्ताह में पौधे रोपाई योग्य तैयार हो जाते हैं।

पौध रोपण

अगेती किस्मों का रोपण कतार से कतार 40 एवं पौधे से पौधे दोनों 40 से0मी० की दूरी पर करते हैं। परन्तु मध्य व पिछेती किस्मों में कतार से कतार की दूरी 50–60 से०मी0 व पौधे से पौधे की दूरी 45 से0मी0 रखते हैं।

सिंचाई

अगेती किस्मों में 5–6 दिनों के अन्तर से तथा पिछेती किस्मों में 10–15 दिनों के अन्तर पर सिंचाई करनी चाहिए। पिछेती किस्मों में पहली सिंचाई पौध रोपण के तुरन्त बाद करना आवश्यक है।

*वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र, बलरामपुर, **शोध छात्रा, सैम हिग्विन बाटम कृषि एवं प्रौद्योगिक विज्ञान संस्थान, नैनी, प्रयागराज

खरपतवार नियंत्रण

फूलगोभी में फूल तैयार होने तक दो–तीन निकाई–गुड़ाई से खरपतवार का नियंत्रण हो जाती है, परन्तु व्यवसाय के रूप में खेती के लिए खरपतवारनाशी दवा स्टाम्प 3.0 लीटर को 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर का छिड़काव रोपण के 2–3 दिन के अन्दर करने से खरपतवार का काफी नियंत्रण हो जाता है।

निकाई–गुड़ाई तथा मिटटी चढ़ाना

पौधों की जड़ों के समुचित विकास हेतु निकाई–गुड़ाई अत्यंत आवश्यक है। इस क्रिया से जड़ों के आस–पास कि मिट्टी ढीली हो जाती है और हवा का आवागमन अच्छी तरह से होता है, जिसका अनुकूल प्रभाव उपज पर पड़ता है। अन्तिम गुड़ाई के समय मिट्टी चढ़ाना आवश्यक है।

सूक्ष्म तत्वों का महत्व एवं उनकी कमी से उत्पन्न विकृतियां

बोरान

बोरान की कमी से फूलगोभी का खाने वाला भाग छोटा रह जाता है इसकी कमी से शुरू में तो फूलगोभी पर छोटे–2 दाग या धब्बा दिखाई पड़ने लगते हैं तथा बाद में पूरा का पूरा हल्का गुलाबी, पीला या भूरे रंग का हो जाता है। इसके रोकथाम के लिए बोरेक्स 10–15 किलाग्राम प्रति हेक्टेयर कि दर से अन्य उर्वरक के साथ खेत में डालना चाहिए।

मॉलीब्डेनम

इस सूक्ष्म तत्व की कमी से फूलगोभी का रंग गहरा हरा हो जाता है और किनारे से सफेद होने लगती है। इसके बचाव के लिए 1.0 से 1.50 किलोग्राम अमोनियम मॉलीब्डेनम प्रति हेक्टेयर की दर से मिट्टी में मिला देना चाहिए।

कटाई

जब गोभी का फूल पूर्ण विकसित व सामान्य आकार ग्रहण कर ले तब कटाई करें, देर से कटाई करने पर फूल का रंग पीला पड़ने लगता है और फूल ढीले पड़ने लगते हैं जिससे बाजार भाव घट जाता है। सुबह का समय फूलों की कटाई के लिए उचित है तथा कटाई के बाद फूलों को आकार के अनुसार छांट लिया जाता है।

उपज

फूलगोभी की औसत उपज 20–30 टन प्रति हेक्टेयर होती है। अगेती फसल से मध्य व पिछेती किस्मों की अपेक्षा कम उपज मिलती है। प्रायः एक हेक्टेयर खेत से 1200– जाते 2100 फूल प्राप्त हो जाते हैं, यद्यपि यह संख्या पोधों की दूरी पर निर्भर करती है।

फसल सुरक्षा

रोग नियंत्रण

पौध गलन या डैम्पिंग ऑफ–

इस रोग का जनक पीथियम नामक फफूंद होता है। इस रोग के कारण बीज के अंकुरित होते ही पौध संक्रमित हो जाती है इस अवस्था में अंकुर भूमि से बाहर नहीं निकलता।

नियंत्रण

2–3 ग्राम कैप्टान या ब्रेसीकाल प्रति किलोग्राम बीज की दर से बोने से पूर्व बीज को शोधित कर लेना चाहिए।

जीवाणु काला सड़न रोग

फूलगोभी एवं बन्दगोभी में यह रोग जैन्थोमोनास कम्पेस्ट्रिक्स नामक जीवाणु से उत्पन्न होता है। पत्तियों पर सबसे पहले अंग्रेजी के.वी. (4) आकार के नमी युक्त हरे भाग बनते हैं, जो बाद में भूरे तथा कुछ समय बाद काले होकर मुरझा जाते है।

नियंत्रण

यह रोग बीज जनित है अतः बीज उपचार 10 प्रतिशत ब्लीचिंग पाउडर के घोल द्वारा अथवा स्टेप्टोसाइक्लीन या प्लान्टोमाइसिन 100 पी.पी.एम. (एक ग्राम दवा दस लीटर पानी में घोलकर) के घोल में बीज डुबा कर उपचार किया जा सकता है।

कीट नियंत्रण

गिडार या सूंडी

गोभी कुल की सब्जियों को विभिन्न प्रकार की पत्तियां खाने वाली गिडार बहुत हानि पहुंचाती हैं। इन कीड़ों से फसल को बचाने के लिए आवश्यक उपाय समय से किये जाने चाहिए। कीट ग्रसित पौधों को देखकर झुण्ड में खाने वाले सूड़ी जैसे–तम्बाकू की सूड़ी या पात गोभी की तितली की सूड़ी को नष्ट करना चाहिए।

नियंत्रण

इन कीड़ों के नियंत्रण हेतु 5 प्रतिशत एलसान या मैलाथियान अथवा 40 प्रतिशत कार्बोरेल धूल का 20–25 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से 2–3 बार प्रकोप के अनुसार भुरकाव करना चाहिए।

धान का हल्दिया (फाल्स स्मट) रोग पूर्वांचल के लिये उभरता खतरा

प्रदीप कुमार* एवं ओम प्रकाश**

धान कई प्रकार के कवक, जीवाणु और वायरल रोगजनकों से ग्रसित हो जाता है। वर्तमान जलवायु परिवर्तन परिदृश्य में धान की फसल को नई बीमारियों की कड़ी प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ रहा है जो आर्थिक रूप से नुकसान नहीं पंहुचा रहे थे। फाल्स स्मट, एक कवक रोग, जो उस्टिलागिनोइडिया विरेन्स के कारण होता है। फाल्स स्मट धान की खेती के लिए एक सम्भावित खतरे के रूप में उभर रहा है, जो पूरे धान के दाने को एक काले रंग की बीजाणु गेंद में बदल देता है। दक्षिणी भारत के कुछ हिस्सों में इसे ''लक्ष्मी'' रोग के रूप में जाना जाता है लेकिन वर्ष 2000 के बाद से इसे एक महामारी रोग के रूप में रिपोर्ट किया गया है।

भारत में यह रोग उधिक उपज और संकर धान की किस्मों को अपनाने, रासायनिक उर्वरकों (उच्च नाइट्रोजन वाले) पर भारी निर्भरता के साथ धान की गहन खेती के तरीकों और जलवायु परिस्थितियों में परिवर्तन के कारण अधिक मात्रा में नुकसान पंहुचा रहे हैं। यह बीमारी 40 से अधिक देशों में चिन्हित की गई है। भारत में, अधिकांश धान उगाने वाले राज्यों जैसे हरियाणा, पंजाब, उत्तरांचल, तमिलनाडु, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, बिहार, झारखंड, गुजरात, महाराष्ट्र, जम्मू और कश्मीर, पांडिचेरी और उत्तर प्रदेश से इस बीमारी की सूचना मिली है। कुछ क्षेत्रों में रोग की तीव्रता इतनी अधिक थी कि संक्रमित क्षेत्र के ऊपर की हवा में अत्यधिक बीजाणु द्रव्यमान के निकलने के परिणामस्वरूप दूर से एक काले धुएँ के रंग के दिखने लगे थे। गंभीर संक्रमण में स्मट बॉल्स की संख्या प्रति पैनिकल 50 से अधिक पहुंच जाती है। भारत के विभिन्न राज्यों में फाल्स स्मट रोग के कारण उपज हानि का अनुमान रोग की तीव्रता और धान की किस्मों के आधार पर 0.2 से 49 प्रतिशत के बीच लगाया गया है। इस फंगस के संक्रमण से स्पाइकलेट्स पर बाँझपन आ जाता है और दाने का वजन कम होने के साथ अंकुरण दर 35 प्रतिशत तक कम हो गई। यह रोग धान उगाने वाले किसानों को सीधा आर्थिक नुकसान पहुंचाता है, रोगजनक भी माइकोटॉक्सिन यानी यूस्टिलोक्सिन पैदा करता है जो मनुष्यों और जानवरों के स्वास्थ्य के लिए जहरीला होता है।

धान का हरदिया रोग के लक्षण : फाल्स स्मट पैनिकल उभरने के बाद ही दिखाई देती है। धान के एक दाने में, केवल कुछ स्पाइकलेट अनियमित ढंग से संक्रमित होते हैं और फाल्स स्मट गेंदों में परिवर्तित हो जाते हैं। यह फूल आने की अवस्था के दौरान पौधे को संक्रमित करता है और संक्रमित पौधों में अलग–अलग धान के दाने बीजाणु गेंदों में बदल जाते हैं। प्रारंभिक संक्रमण चरण में स्पाइकलेट के आंतरिक स्थान से निकलने वाले सफेद कवक द्रव्यमान का गठन होना विशिष्ट लक्षण है। इसके बाद एक हल्के–पीले–नारंगी स्मट बॉल में परिवर्तन होता है, जो अंततः, हरे–काले रंग में बदल जाता है। परिपक्व स्मट बॉल की बाहरी परत में कई क्लैमाइडोस्पोर होते हैं, और अक्सर शरद ऋतु में स्क्लेरोटिया द्वारा कवर होते है। पुष्पगुच्छ में आमतौर पर कुछ दाने ही संक्रमित होते हैं और बाकी सामान्य होते हैं।

फाल्स स्मट का विज्ञान और रोग चक्रः बादल वाले मौसम, उच्च आर्द्रता (>90%), 25–35 डिग्री सेल्सियस के बीच तापमान और फूल अवधि के दौरान मध्यम वर्षा रोग के विकास के लिए अनुकूल है। उच्च नाइट्रोजन सामग्री वाली मिट्टी भी रोग के विकास के लिए अनुकूल होती है। हवा कवक के बीजाणुओं को पौधे से पौधे तक फैला सकती है। रोगजनक वैकल्पिक पौधे जैसे की इचिनोक्लोआ क्रूसगैली, डिजिटेरिया मार्जिनेट इम्पेराटा सिलिंड्रिका और पैनिकम एसपी के माध्यम से

'विषय वस्तु विशेषज्ञ फसल सुरक्षा एंव **वरिष्ठ वैज्ञानिक एंव अध्यक्ष कृषि विज्ञान केन्द्र, सिद्धार्थनगर, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

भी जीवित रहता है। विलोसिकलावा स्क्लेरोटिया नामक कवक संरचनाओं का निर्माण कर के सर्दियों में जीवित रहते है, जिसमें क्लैमाइडोस्पोर (आराम करने वाले बीजाणु) और मायसेलिया के कॉम्पैक्ट रूप में होते हैं। कवक देर से मौसम में क्लैमाइडोस्पोर और स्क्लेरोटिया बनाता है जो मिट्टी में गिर जाता है और सर्दियों में खेत की परिस्थितियों में कम से कम 4 महीने तक जीवित रहता है। स्क्लेरोटिया एस्कोस्पोर्स युक्त एस्कोकार्प का उत्पादन करने के लिए अंकुरित होते हैं, जो धान के पौधे में संक्रमण के प्राथमिक स्रोत के रूप में कार्य करते हैं, जबकि क्लैमाइडोस्पोर संक्रमण का एक द्वितीयक स्रोत हैं जो हवा के द्वारा पौधों में आ सकते हैं। विलोसिक लावा धान के स्पाइकलेट को देर से लगाए हुए धान की बूटिंग अवस्था में संक्रमित करता है, और गहरे हरे रंग के क्लैमाइडोस्पोर्स से ढके झूठे स्मट बॉल्स का उत्पादन करता है। कभी – कभी, शरद ऋतु में फाल्स स्मट गेंदों की सतह पर देर से स्क्लेरोटिया बनता है, जब दिन और रात के बीच तापमान में बहुत उतार चढ़ाव होता है। क्लैमाइडोस्पोर और स्क्लेरोटिया दोनों प्राथमिक संक्रमण स्रोतों के रूप में काम कर सकते हैं। राइस बूटिंग चरण में वर्षा एक प्रमुख पर्यावरणीय कारक है जिसके परिणाम स्वरूप धान के झूठे स्मट रोग की महामारी होती है। धान के पौधे में फूल आने के दौरान धान की गुठली के प्रारंभिक संक्रमण के लगभग 20 दिनों के बाद नकली स्मट गॉल उभरता है। संक्रमण के परिणाम स्वरूप पौधों के परिपक्व सिरे पर एक या एक से अधिक गुठली होती है, जिसे ग्लोबोज, पीले – हरे, मखमली स्मट बॉल्स द्वारा प्रतिस्थापित किया जाता है। जब स्मट बॉल्स फटते हैं, तो गहरे हरे रंग के पाउडर की तरह बीजाणु निकलते हैं।

धान की फाल्स स्मट रोग का प्रबंधनः धान की फाल्स स्मट के लिए सफल प्रबंधन रणनीति विकसित की जानी बाकी है। हालांकि, संभावित प्रबंधन रणनीति के रूप में निम्नलिखित उपाय किए जाने चाहिए–

- खेत की सफाई – मेजबान खरपतवारों और पौधों के अपशिष्टों को हटाना।
- नीम की खली 150 किग्रा / हेक्टेयर की दर से उपयोग करें।
- बिजाई के लिए रोग मुक्त बीजों का प्रयोग करें।
- बुवाई से पहले स्यूडोमोनास फ्लोरोसेंस/ ट्राइकोडर्मा विरिडी 10 ग्राम/किलोग्राम बीज या कार्बेन्डाजिम 10 ग्राम/किलोग्राम से बीज उपचार करें।
- नाइट्रोजन की अधिक मात्रा एवं देर से बुवाई से बचें क्योंकि अधिक नाइट्रोजन के प्रयोग से रोग को बढ़ावा मिलता है।
- फसल की जल्दी बुवाई कर देनी चाहिए।
- मोनो क्रॉपिंग से बचें और गैर–पोषक फसलों के साथ फसल चक्र का पालन करें।
- रोपाई के बाद या फूल आने से पहले 15–20 दिनों के अंतराल पर स्यूडोमोनासफ्लोरेसेंस/ ट्राइकोडर्मा विरिडी 5 ग्राम/लीटर पानी के साथ पर्णीय छिडकाव करें।
- जुताई और फूल आने से पहले के चरणों में हेक्साकोनाजोल या प्रोपिकोनाजोल या टेबुकोनाजोल का 1 मिली/लीटर या कार्बेन्डाजिम मैनकोजेब 2 ग्राम/लीटर या क्लोरोथालोनिल 2 ग्राम/लीटर का छिड़काव करें।
- फंगल संक्रमण को रोकने के लिए कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 5 ग्राम/लीटर या प्रोपिकोनाजोल 1.0 मिली/लीटर पर बूट लीफ और मिल्की स्टेज पर स्प्रे करें।
- कटाई के दौरान रोग ग्रस्त पौधों को हटा देना चाहिए और खेत में स्क्लेरोटिया के गिरने से बचने के लिए नष्ट कर देना चाहिए। इससे अगली फसल के लिए प्राथमिक इनोकुलम कम हो जाएगा।

फसल अवशेष प्रबंध

राम लखन सिंह* एवं मनीष कुमार मौर्य**

फसल कटाई के उपरांत भूमि में पड़े हुए जड़ तना पत्ती आदि भागों को फसल अवशेष कहा जाता है। यह किसानों के लिए मूल्यवान प्राकृतिक संसाधन है। फसल अवशेष मृदा में कार्बनिक पदार्थ का प्राथमिक स्रोत एवं कृषि पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिरता के लिए एक महत्वपूर्ण घटक है। एक टन फसल अवशेष में लगभग 400 किलोग्राम कार्बन, 5 किलोग्राम नत्रजन, 1 किलोग्राम फास्फोरस और 15 किलोग्राम पोटाश होता है और एक टन फसल अवशेष से लगभग 11 किलोग्राम यूरिया, 10 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट, 25 किलोग्राम म्यूरेट आफ पोटाश के बराबर और प्रचुर मात्रा में सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे जिंक, कॉपर, मैग्नीज, आयरन आदि प्राप्त होते हैं। यह जल में घुलनशील पोषक तत्व का बेहतरीन स्रोत है। इनका समुचित प्रबंध कर किसान भाई भूमि की उर्वरा शक्ति को बढ़ा सकते हैं।

किसान भाई इन फसल अवशेषों का प्रबंधन करने के बजाय इनको जला देते हैं जिससे वातावरण प्रदूषित होता है और भी कई हानियां होती हैं। अतः फसल अवशेषों का प्रबंधन करना अति आवश्यक है।

फसल अवशेष प्रबंधन की विधियां–

1. फसल अवशेषों को भूमि की सतह मे छोड़ने से भूमि मे जीवांश पदार्थ की मात्रा को बढ़ाया जा सकता है।
2. धान फसल की कटाई के बाद खेत में खड़े धान के ठूँठ में जीरो टिल सीड कम फर्टिड्रिल मशीन या हैपी सीडर से बुवाई कर सकते हैं। धान के ठूँठ कुछ दिन में सड़कर खाद में बदल जाते हैं।
3. उन्नतशील कृषि यंत्रों पैडी स्ट्रा मल्चर, रोटावेटर के प्रयोग से फसल अवशेष बारीक टुकड़ों में कटकर मिट्टी में मिल जाते हैं और सड़कर खाद का काम करते हैं।
4. फसल अवशेषों को इकट्ठा कर नाडेप कंपोस्ट तैयार कर खेत में प्रयोग करें। उन क्षेत्रों में जहां पर पशुओं को चारे की समस्या नहीं होती है, वहां पर मक्का, ज्वार, बाजरा आदि फसलों के भुट्टों को तोड़ने के बाद शेष भाग की कंपोस्ट खाद बनाई जा सकती है।
5. फसल कटाई के बाद भूमि में पड़े हुए फसल अवशेषों को सड़ाने के लिए 20 किलोग्राम नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से जुताई या बुवाई के समय भूमि में मिला देने से फसल अवशेष 3 से 4 सप्ताह में सड़कर खाद का काम करते हैं। इससे फसलों के उत्पादन पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है।
6. फसल की कटाई कंबाइन हार्वेस्टर से करने पर खेत में फसल अवशेष काफी मात्रा में बच जाते हैं। इनका उपयोग पशु चारे के रूप में अथवा कंपोस्ट खाद बनाने में किया जा सकता है। अवशेष में फसल के लिए सभी आवश्यक पोषक तत्व मौजूद होते हैं। खाद बनाये जाने पर सभी पोषक तत्व उपलब्ध होते हैं।
7. फसल अवशेष को पलवार के रूप में प्रयोग करने पर नमी अधिक दिनों तक सुरक्षित रहती है तथा खरपतवारों का जमाव कम होता है।
8. फसल अवशेष को पशुओं के चारे के रूप में प्रयोग किया जाता है।
9. फसल अवशेष को पशुओं के बांधने की जगह बिछावन के रूप में प्रयोग कर सकते हैं।
10. मशरूम उत्पादन में प्रयोग किया जा सकता है।
11. घरों के छप्पर में प्रयोग किया जाता है ।
12. पैकिंग मैटेरियल के रूप में प्रयोग कर सकते हैं।
13. फसल अवशेष से कार्बनिक खाद तैयार की जा सकती है। इनसे बायोकोल, बायो सीएनजी तथा बायोएथेनॉल का व्यवसायिक उत्पादन किया जा सकता है ।

फसल अवशेषों को जलाने से होने वाली हानियां

1. फसल अवशेष को जलाने से इनकी जड़ तना व पत्तियों में मौजूद पोषक तत्व जलकर नष्ट हो जाते हैं। इससे 100% नत्रजन, 25% फास्फोरस, 20% पोटाश और 60% सल्फर का नुकसान होता है, जिससे भूमि की उर्वरा शक्ति क्षीण हो जाती है।
2. लाभदायक मित्र कीट जलकर मर जाते हैं जिससे वातावरण पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

(शेष पृष्ठ 11 पर)

*एसएमएस/सह प्राध्यापक, शस्य विज्ञान, **एसएमएस फसल सुरक्षा, कृषि विज्ञान केंद्र मनकापुर गोंडा–2

वर्ष भर कमाई का स्रोत : नीबूवर्गीय फल

रवि प्रताप* एवं धर्मेन्द्र बहादुर सिंहर**

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में नीबूवर्गीय फलों का अग्रणीय स्थान है। विगत कुछ वर्षों में कोरोना महामारी एवं जलवायु परिवर्तन, बदलती जीवन शैली से इन फलों का महत्व स्वास्थ्य के लिए बहुत अधिक है क्योंकि इनमें विटामिन–सी, फ्लावनोइड और एंजाइम अधिक मात्रा में पाए जाते हैं। किसानों की आमदनी दोगुनी करने में यह फल काफी महत्वपूर्ण है। इसमें उपलब्ध प्रजातियों तथा किस्मों की उपलब्धता के कारण इसकी बागवानी से वर्षभर आमदनी प्राप्त की जा सकती है। अगर किस्मों का चयन वैज्ञानिकों के सुझाव से किया जाये तो निश्चित तौर पर इन फलों की बागवानी से किसानों को वर्षभर अधिक आमदनी मिल सकती है।

देश भर में नीबूवर्गीय फलों की बागवानी व्यापक रूप से की जाती है। भारत में केले और आम के बाद नीबू का तीसरा स्थान है। इन फलों को भारत में आंध्र प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक, उत्तराखंड, बिहार, असोम, राजस्थान, मध्य प्रदेश और अन्य राज्यों में सफलतापूर्वक उगाया जाता है। पूरे साल इनकी उपलब्धता के कारण ये भारत में सबसे लोकप्रिय फल हैं। नीबूवर्गीय फल आर्थिक रूप से बहुत महत्वपूर्ण हैं।

बागवानी की तकनीक

जलवायु एवं मृदा

नीबूवर्गीय फलों की बागवानी उपोष्ण तथा उष्णीय, दोनों प्रकार की जलवायु में अच्छी तरह से की जा सकती है। इस वर्ग के फलों की सामान्यतया बागवानी दोमट तथा बलुई दोमट मिट्टी, जहां जल निकास का उत्तम प्रबंधन हो एवं पी–एच 5.5 से 7.2 तक हो, उपयुक्त है। अच्छी बढ़वार तथा पैदावार के लिए मृदा की गहराई 4 फुट से अधिक होनी चाहिए। सिंचाई के जल में 750 मि.ग्रा./ लीटर से अधिक लवण होने पर इन किस्मों को लवण अवरोधी मूलवृंत जैसे 639 या आरएलसी – 6 पर लगाकर रोपण करना चाहिए।

बाग की स्थापना

प्रजातियों तथा किस्मों के आधार पर पंक्ति से पंक्ति तथा पौध से पौध की दूरी का निर्धारण करना चाहिए। साधारणतया कागजी नीबू, लेमन, मौसमी, ग्रेपफ्रूट तथा टेनजेरिन को 4 गुणा 4 मीटर या 5 गुणा 5 मीटर की दूरी पर लगाते हैं। पौध रोपण से पहले जून में 3 गुणा 3 फुट आकार के गड़ढे खोद लिए जाते हैं। 0–5 दिनों बाद इन गड़ढों को मिट्टी तथा सड़ी हुई गोबर की खाद (4 के अनुपात में) से भरने के बाद हल्की सिंचाई करें। इसके बाद पहली बरसात के बाद चुनी हुई किस्मों के पौधों का रोपण करना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

उपोष्ण जलवायु में गोबर की खाद की पूरी मात्रा का प्रयोग दिसंबर–जनवरी में तथा रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग दो बराबर मात्रा में बांटकर करना चाहिए। लेमन को छोड़कर सभी किस्मों में पहली खुराक मार्च में और दूसरी जुलाई–अगस्त में देनी चाहिए। लेमन में उर्वरक एक बार मार्च–अप्रैल में प्रयोग करना चाहिए। उर्वरकों का प्रयोग करते समय पर्याप्त नमी होनी चाहिए, अन्यथा प्रयोग के बाद सिचाई आवश्यक है। अगर दीमक की समस्या हो तो क्लोरोपाइरीफॉस या नीम की खली का प्रयोग करें।

सिंचाई

उपरोक्त सभी प्रजातियों का प्रतिरोपण करने के तुरन्त बाद बाग की सिंचाई करें। पौधों की सिंचाई उनके आस पास थाला बनाकर की जा सकती है या टपक सिंचाई पद्धति का प्रयोग करें। थाला पद्धति में गर्मियों के मौसम में हर 40 या 45 दिनों के अंतर पर और सर्दियों के मौसम में प्रति 4 सप्ताह बाद सिचाई करनी चाहिए। सिंचाई करते समय ध्यान रखें कि सिंचाई का पानी पेड़ के मुख्य तने के सम्पर्क में न आए। इसके लिए मुख्य तने के आसपास मिट्टी डाल देनी चाहिए। उपोष्ण जलवायु में अच्छे पुष्पन के लिए फूल आने से पहले तथा इसके दौरान सिंचाई न करें।

निराई–गुड़ाई

पौधों में अच्छी वृद्धि तथा बढ़वार के लिए उपरोक्त प्रजातियों/किस्मों के बागों की गहरी जुताई नहीं करनी चाहिए। इन पेड़ों की जड़ें जमीन की ऊपरी

*शोध छात्र, फल विज्ञान विभाग, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, नवाबगंज, कानपुर, उत्तर प्रदेश
**शोध छात्र, सब्जी विज्ञान विभाग, उद्यान महाविद्यालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

सतह में रहती हैं और गहरी जुताई करने से उनके नष्ट हो जाने का ख़तरा रहता है। बागों में खरपतवारों की रोकथाम की जाए तो ज्यादा अच्छा है। पौधों के थालों में निराई करके खरपतवार निकाल देने चाहिए और पौधों की पंक्तियों में बीच में ग्लाइफोसेट 5 मि.ली. /लीटर का घोल बनाकर छिड़काव करें।

रोग

फाइटोफ्थोरा सड़न

यह रोग उपरोक्त सभी किस्मों को प्रभावित करता है। जलभराव होने के कारण यह रोग अधिक फैलता है। त्वचा का सड़ना, जड़ों का सड़ना, अत्यधिक गोंद निकलना तथा पौधों का सूखना इस रोग के मुख्य लक्षण हैं। जहां पानी का भराव अधिक होता है, वहां यह रोग अधिक पाया जाता है। पौधशाला को फाइटोफ्थोरा रहित भूमि में उगने, पानी का उचित जल निकास, तनों के चारों तरफ 60 से.मी. ऊंचाई तक बोर्डेक्स मिश्रण का लेप लगाने. अवरोधी मूलवूंत (ट्राइफोलिएट ओरेंज) का चुनाव तथा मूलवृत पर 30 सैं.मी. ऊंचाई पर कलिकायन करने से रोग को फैलने से रोका जा सकता है। रोग फैलने से रोकने के लिए बोर्डो पेस्ट (4 मि.ग्रा. चूना, 4 मि. ग्रा. कॉपर सल्फेट + 40 लीटर पानी) से पौधों की 2–3 फीट ऊंचाई तक पुताई वर्ष में दो बार अवश्य करें। रोग का संक्रमण होने पर रिडोमिल गोल्ड (2.5 ग्राम/लीटर) पानी का घोल बनाकर पेड़ के थात्रों में भरें तथा इसी घोल का पर्णीय छिड़काव करें।

कैंकर रोग

यह मुख्यतया कागजी नीबू तथा ग्रेपफ्रूट के पौधों और फलों को प्रभावित करता है। बरसात के मौसम में यह रोग आमतौर पर दिखाई देता है। यह पत्तियों, टहनियों, कांटों और फलों को प्रभावित करता है। सबसे पहले पौधों के उक्त भागों में छोटे–छोटे हल्के पीले रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। अंततः ये धब्बे उठे हुए और खुरदरे हो जाते हैं। इस रोग की रोकथाम हेतु मुख्यतः प्रभावित शाखाओं को काटकर कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 3 ग्राम प्रति लीटर का घोल बनाकर छिड़काव करें। इसके अलावा, स्ट्रेप्टेसाइक्लीन नामक रसायन की एक ग्राम मात्रा को 50 लीटर पानी में घोलकर 3 या 4 बार छिड़कने से अथवा एक ग्राम नीम की खली को 20 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव से भी इस रोग से छुटकारा पाया जा सकता है।

प्रमुख कीट एवं प्रबंधन

माहू

यह कीट उपरोक्त सभी प्रजातियों की पत्तियों और टहनियों की कोशिका से रस चूस लेता है। कीटों द्वारा कोशिका रस चूस लिए जाने के कारण पत्तियां, कलियां और फूल मुरझा जाते हैं। यह कीट हमेशा फूल आने के समय आक्रमण करता है। इसके साथ–साथ यह कीट एक किस्म के विषाणुओं को भी फैलाता है, जिससे नीबू की पैदावार कम होती है। इस कीट की रोकथाम के लिए 45 मि.ली.–मैलाथियान को 40 लीटर पानी में बने घोल का छिड़काव फूल आने से पहले करना चाहिये। इसके अलावा फोरेट 10जी का प्रयोग मृदा में किया जा सकता है।

पर्णसुरंगी

यह कीट मीठी नारंगी, नीबू, ग्रेपफ्रूट आदि सभी पौधों को नुकसान पहुंचाता है। यह हमेशा नई पत्तियां निकलते समय आक्रमण करता है। यह कीट बाग के पेड़ों के अतिरिक्त नर्सरी के पौधों को भी नुकसान पहुंचाता है। इसकी इल्लियां पत्तियों में टेढी–मेढी सुरंग बनाती हैं। जब पेड़ों में नये फुटाव हो रहे हों तब मोनोक्रोटोफॉस 3–5 मि.ली. प्रति 70 लीटर पानी या स्पीनोसेड 4 मि.ली. प्रति 40 लीटर पानी में घोल बनाकर दो छिड़काव 45 दिनों के अंतर पर करें।

मिलीबग

ये कीट कोमल शाखाओं एवं पुष्पक्रम आदि पर चिपक कर रस चूसते हैं, जिससे फूल तथा फल गिरने लगते हैं। इनकी रोकथाम के लिए कार्बोसल्फान (5 मि.ली. प्रति 40 लीटर पानी) के घोल का छिड़काव करना चाहिए।

फलों की तुड़ाई

उपरोक्त किस्मों की तुड़ाई अलग–अलग समय पर की जाती है। लेमन तथा कागजी नींबू 150–180 दिनों में पककर तैयार हो जाते हैं। वहीं मीठी नारंगी तथा ग्रेपफ्रूट 260–280 दिनों में पकते हैं। इसके अलावा किन्नू तथा टेंजेरिन 300 से अधिक दिनों में पकते हैं। फलों को तोड़ते समय इस बात की विशेष सावधानी बरतनी होती है कि फलों के साथ–साथ थोड़ा सा हिस्सा तनों और पत्तियों का भी तोड़ लिया जाए ताकि

फल के छिलके को नुकसान ना हो । फलों की तुड़ाई बाजार की मांग तथा प्रचलित फलों के मूल्य को ध्यान में रखकर करनी चाहिए। कागजी नीबू एवं लेमन के फल हल्के पीले होने पर तोड़ने चाहिए, जबकि मीठी नारंगी तथा किन्नो का कुल ठोस पदार्थ तथा अम्लता का अनुपात 44 से अधिक हो, तो तोड़ने चाहिए।

इस प्रकार नींबूवर्गीय किस्मों में विविधीकरण करके तथा उनका वैज्ञानिक विधियों से बाग प्रबंधन करने से अधिक उत्पादन के साथ–साथ वर्ष भर आमदनी की जा सकती है तथा किसानों की आमदनी बढ़ाई जा सकती है।

सारणी 1. वर्ष भर फलन लेने हेतु नीबूवर्गीय फलों के लिए उपयुक्त फसलें एवं किसमें

फसल	किस्म	तुड़ाई का समय
कागजी नींबू	पूसा उदित	फरवरी मार्च, अगस्त सितम्बर
	पूसा अभिनव	मार्च अप्रैल, अगस्त सितम्बर
नींबू	कागजी कलां	जुलाई अगस्त, दिसम्बर जनवरी
	पंत लेमन	जुलाई अगस्त, दिसम्बर जनवरी
मीठी नारंगी	पूसा राउंड	अक्टूबर नवम्बर
	पूसा शरद	अक्टूबर नवम्बर
	मोसम्बी	अक्टूबर नवम्बर
ग्रेपफ्रूट	रेडब्लस	नवम्बर दिसम्बर
टेंजेरिन	मरकट	नवम्बर दिसम्बर
संतरा	किन्नू	दिसम्बर जनवरी

(पृष्ठ 08 का शेष)

3. पशुओं का चारा जलकर नष्ट हो जाता है जिससे पशुओं के चारे की समस्या उत्पन्न हो जाती है।
4. फसल अवशेषों को जलाने से किसानों की अन्य फसलों एवं गांव में आग लगने की संभावना बनी रहती है।
5. मिट्टी के तापमान में वृद्धि होती है जिसके कारण मृदा के भौतिक रासायनिक एवं जैविक दशाओं पर विपरीत प्रभाव पड़ता है ।
6. वायु प्रदूषण होता है तथा इससे कई बीमारियां उत्पन्न होती हैं। धुंध के कारण दुर्घटनाएं होती हैं।
7. एक टन फसल अवशेष जलाने से 2 किलोग्राम सल्फर डाइआक्साइड, 3 किलोग्राम कणिका तत्व, 60 किलोग्राम कार्बन मोनोऑक्साइड, 1460 किलोग्राम कार्बन डाइऑक्साइड, 199 किलोग्राम राख निकलती है जिससे पर्यावरण प्रदूषित होता है।
8. यह मृदा को ठोस एवं शुष्क बना देती है, जिससे मृदा की अंतः स्पंदन क्षमता कम हो जाती है।

फसल अवशेष प्रबंधन से लाभ– फसल अवशेष को कंपोस्ट या वर्मी कंपोस्ट खाद बनाकर प्रयोग करने से खेत की उर्वरा शक्ति में वृद्धि होती है। भूमि में लाभदायक जीवाणुओं की संख्या प्राकृतिक रूप से बढ़ती है। खेत की जल धारण क्षमता एवं वायु संचार बढ़ जाता है। खेत की भौतिक एवं रासायनिक संरचना में सुधार होता है। फसल अवशेषों की मल्चिंग करने से नमी अधिक दिनों तक संरक्षित होती है तथा खरपतवारों का जमाव कम होता है।

फसल अवशेष अपघटन को प्रभावित करने वाले कारक

मृदा में फसल अवशेष अपघटन को प्रभावित करने वाले मुख्य कारक निम्नवत हैं:–

फसल अवशेष कारक विघटन की प्रारंभिक अवस्था में शुगर और अमीनो एसिड का विघटन कुछ घंटों में ही शुरू हो जाता है एवं समय के साथ–साथ इसमें तेजी आती है। प्रारंभिक विघटन प्रक्रिया की शुरुआत में साधारण चीनी (शुगर) और अमीनो अम्ल का नुकसान कुछ ही घंटों या दिनों में तेजी से होता है। लिग्निन फसल अवशेष को 5 से 30% पदार्थ बनाता है। लिग्निन मृदा ह्यूमस निर्माण के लिए एक महत्वपूर्ण पदार्थ है।

मृदीय घटक कारक

चावल और गेहूं के अवशेषों के प्रयोग से क्रमशः 24 से 29 प्रतिशत और 39.5 से 43.4 प्रतिशत कार्बन, 25 से 40 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान पर 60 दिनों में विघटित हो जाता है। उचित नमी की मात्रा मृदा जल धारण में 30% से कम तथा 150 प्रतिशत से अधिक होने पर फसल अवशेषों का विघटन दर प्रभावित होता है।

पोषक तत्वों की अधिक उपलब्धता वाले प्रक्षेत्र में फसल अवशेष का विघटन जल्दी होता है अतः फसल अवशेष को उचित नमी में पोषक तत्वों से उपचारित कर विघटन को बढ़ाया जा सकता है। फसल अवशेष को मृदा की सतह में छोड़ने के बजाय मिट्टी में मिला कर या भूमिगत करने पर विघटन दर में वृद्धि होती है। उदासीन पी.एच. मान पर सूक्ष्मजीवों की क्रियाशीलता अधिक होने से विघटन तीव्र गति से होता है।

धनिया की उन्नत खेती से अधिकाधिक लाभ

आलोक कुमार* एवं अग्निवेश यादव**

प्राचीन काल से ही विश्व में भारत देश को ''मसालों की भूमि'' के नाम से जाना जाता है। धनिया के बीज एवं पत्तियां भोजन को सुगंधित एवं स्वादिष्ट बनाने के काम आते हैं। धनिया बीज में बहुत अधिक औषधीय गुण होने के कारण कुलिनरी के रूप में, कार्मिनेटीव और डायरेटिक के रूप में उपयोग में आते हैं। धनिया मसालों वाली फसलों में महत्वपूर्ण स्थान रखती है।इसके दानों में पाये जाने वाले वाष्पशील तेल के कारण यह भोज्य पदार्थों को स्वादिष्ट एवं सुगन्धित बनाती है।इसके साबूत दाने या पीस कर अचार, सास और मिठाईयों आदि खाद्य पदार्थों को सुगन्धित करने के काम में लेते हैं।वाष्पशील तेल से सुगन्धित द्रव्य व खुशबूदार साबुन बनाये जाते हैं। इसकी पत्तियाँ एवं मुलायम तने चटनी बनाने तथा शाक–भाजी व सूप सलाद को स्वादिष्ट में सहायक है।यदि कृषक इसकी खेती वैज्ञानिक तकनीक से करें, तो अच्छा उत्पादन प्राप्त कर सकते है।इस लेख में धनिया की उन्नत खेती कैसे करें की पूरी जानकारी का उल्लेख है।

उपयोग एवं महत्व

धनिया एक बहुमूल्य बहुउपयोगी मसाले वाली आर्थिक दृष्टि से भी लाभकारी फसल है। धनिया के बीज एवं पत्तियां भोजन को सुगंधित एवं स्वादिष्ट बनाने के काम आते हैं। धनिया बीज में बहुत अधिक औषधीय गुण होने के कारण कुलिनरी के रूप में, कार्मिनेटीव और डायरेटिक के रूप में उपयोग में आते हैं। भारत धनिया का प्रमुख निर्यातक देश है। धनिया के निर्यात से विदेशी मुद्रा अर्जित की जाती है।

उपयुक्त जलवायु

धनिया की खेती के लिए शुष्क व ठंडा मौसम अच्छा उत्पादन प्राप्त करने के लिये अनुकूल होता है।बीजों के अंकुरण के लिय 25 से 26 सेंटीग्रेड तापमान अच्छा होता है।धनिया शीतोष्ण जलवायु की फसल होने के कारण फूल तथा दाना बनने की अवस्था पर पाला रहित मौसम की आवश्यकता होती है।धनिया को पाले से बहुत नुकसान होता है।धनिया बीज की उच्च गुणवत्ता और अधिक वाष्पशील तेल के लिये ठंडी जलवायु, अधिक समय के लिये तेज धूप, समुद्र से अधिक ऊचाई भूमि की आवश्यकता होती है।

खेत की तैयारी

धनिया के लिये अच्छे जल निकास एवं उर्वरा शक्ति वाली दोमट या मटियार दोमट भूमि उपयुक्त होती है।मिट्टी का पी एच मान 6.5 से 7.5 होना चाहिए। खेत में अच्छी तरह से मिट्टी को भुरभुरा बना लें और अंतिम जुताई के समय 15 से 20 टन गोबर या कम्पोस्ट की अच्छी सडी खाद को खेत में एक साथ मिला दें यदि खेत में नमी की मात्रा कम हो तो पलेवा कर देना चाहिए।

उन्नतशील प्रजातियाँ

हमारे देश में उपलब्ध धनिया की प्रजातियों को तीन वर्गों में बांटा जा सकता है, जैसे–

बीज वालीप्रजातियाँ – इन किस्मों का उपयोग बीज मसाले में किया जाता है।इनके बीज अधिक सुगन्धित होते है, क्योंकि इनमें तेल की मात्रा भी अधिक होती है, जैसे– आर सी आर– 20, स्वाति, साधना, राजेन्द्र और सी एस– 287 आदि प्रमुख हैं।

पत्ते व सलाद वालीप्रजातियाँ – इन किस्मों के हरे पत्ते काटकर उपयोग में लाए जाते है, जैसे– आर सी आर– 41 और गुजरात धनिया– 2 आदि, ये किस्में पत्तों से सुगन्ध देती हैं।

दोहरे उपभोग की प्रजातियाँ – इस प्रकार की किस्में दाने और पत्ते दोनों के लिए उगाई जाती है, जैसे– को– 02, को– 03 और पूसा चयन– 360 आदि।यह किस्में लम्बी अवधि की होती है।पत्तों की तीन कटाई के बाद इन्हें बीज पकने के लिए छोड़ दिया जाता है।धनिया की फसल रबी मौसम में उगाई जाती है। धनिया बोने का सबसे उपयुक्त समय 15 अक्टूबर से 15 नवम्बर है।

बीज की मात्रा

सिंचित अवस्था में 15 से 20 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर

*शोध छात्र, फल विज्ञान विभाग, **शोध छात्र, सब्जी विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्व विद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

तथा असिंचित में 25 से 30 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है।

बीजोपचार

भूमि एवं बीज जनित रोगों से बचाव के लिये बीज को कार्बेन्डाजिम + थाइरम (2.1) 3 ग्राम प्रति किलोग्राम या कार्बोक्जिन 37.5 प्रतिशत + थाइरम 37.5 प्रतिशत 3 ग्राम प्रति किलोग्राम + ट्राइकोडर्मा विरिडी 5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करें।बीज जनित रोगों से बचाव के लिये बीज को स्ट्रेप्टोमाईसिन 500 पी पी एम से उपचारित करना लाभदायक रहता है।

बुवाई का समय

धनिया की फसल की बुवाई का उपयुक्त समय 15 अक्टूबर से 15 नवम्बर है। हरी पत्ती की फसल के लिए अक्टूबर से दिसम्बर का समय बिजाई के लिए उपयुक्त है। पाले से बचाव के लिए धनियाँ को नवम्बर के द्वितीय सप्ताह में बोना उपयुक्त होता है।

बुवाई की विधि

बोने के पहले धनिया बीज को सावधानीपूर्वक हल्का रगड़कर बीजो को दो भागो में तोड़ कर दाल बनावें। धनिया की बोनी सीड ड्रील से कतारों में करें, कतार से कतार की दूरी 30 सेंटीमीटर एवं पौधे से पौधे की दूरी 7 से 10 सेंटीमीटर रखें।भारी भूमि या अधिक उर्वरा भूमि में कतारों की दूरी 40 सेंटीमीटर रखनी चाहिए। धनिया की बुवाई पंक्तियों में करना अधिक लाभदायक है। कूंड़ में बीज की गहराई 2 से 4 सेंटीमीटर तक होनी चाहिए। बीज को अधिक गहराई पर बोने से अंकुरण कम होता है।

खाद एवं उर्वरक

धनिया की अच्छी पैदावार लेने के लिए गोबर की सडी हुई खाद 10 से 15 टन प्रति हेक्टेयर के साथ असिंचित फसल के लिए 80 किलोग्राम नत्रजन, 50 किलोग्राम फास्फोरस, 50 किलोग्राम पोटाश तथा 50 किलोग्राम सल्फर प्रति हेक्टेयर की दर से तथा सिंचित फसल के लिए 60 किलोग्राम नत्रजन, 40 किलोग्राम फास्फोरस, 20 किलोग्राम पोटाश और 20 किलोग्राम सल्फर प्रति हेक्टेयर की दर से उपयोग करें।

सिंचाई प्रबंधन

धनिया की फसल में पहली सिंचाई 30 से 35 दिन बाद (पत्ती बनने की अवस्था) दूसरी सिंचाई 50 से 60 दिन बाद (शाखा निकलने की अवस्था), तीसरी सिंचाई 70 से 80 दिन बाद (फूल आने की अवस्था) तथा चौथी सिंचाई 90 से 100 दिन बाद (बीज बनने की अवस्था) करना चाहिऐ।हल्की जमीन में पांचवी सिंचाई 105 से 110 दिन बाद (दाना पकने की अवस्था) करना लाभदायक रहता है।

खरपतवार नियंत्रण

धनिया की फसल को खरपतवार से मुक्त रखना अति आवश्यक होता है। इसके लिए फसल में 2 से 3 बार निराई–गुडाई कर देनी चाहिए। पहली निराई बुवाई से 20 से 30 दिन बाद कर देनी चाहिए। तथा दूसरी एवं तीसरी 20 से 25 दिन के अंतराल पर कर देनी चाहिए। धनिया फसल में खरपतवार प्रतिस्पर्धा की क्रांतिक अवधि 35 से 40 दिन धनिया फसल में खरपतवरों की अधिकता होने पर खरपतवारनाशी पेंडिमीथालिन 30 ई सी 3 लीटर को 600 से 700 पानी में मिलकर प्रति हेक्टेयर बुवाई के 2 दिन तक छिड़काव कर के नियंत्रण पाया जा सकता है।

गहाई

धनिया का हरा–पीला कलर और सुगंध प्राप्त करने के लिए धनिया की कटाई के बाद छोटे–छोटे बण्डल बनाकर 1 से 2 दिन तक खेत में खुली धूप में सुखाना चाहिए। बण्डलों को 3 से 4 दिन तक छाया में सुखायें या खेत मे सुखाने के लिए सीधे खड़े बण्डलों के ऊपर उल्टे बण्डल रख कर ढेरी बनावें।ढेरी को 4 से 5 दिन तक खेत में सूखने देवें। सीधे–उल्टे बण्डलों की ढेरी बनाकर सुखाने से धनिया बीजों पर तेज धूप नही लगने के कारण वाष्पशील तेल उड़ता नही है।

उपज

धनिया की औसत उपज किस्म, मौसम और फसल की देखभाल आदि पर निर्भर करती है। परन्तु उपरोक्त वैज्ञानिक तकनीक से खेती करने पर सिंचित फसल से 15 से 20 क्विंटल बीज तथा 100 से 125 क्विंटल पत्तियों की उपज तथा असिंचित फसल की 7 से 9 क्विंटल उपज प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है।

सहजन उत्पादन की वैज्ञानिक तकनीक

अखिल कुमार चौधरी* एवं आलोक कुमार**

सहजन (Moringa Tree) वानस्पतिक नाम : "मोरिंगा ओलिफेरा" (Moringa oleifera) एक बहुत उपयोगी पेड़ है। इसे हिन्दी में सहजना, सुजना, सेंजन और मुनगा आदि नामों से भी जाना जाता है। इस पेड़ के विभिन्न भाग अनेकानेक पोषक तत्वों से भरपूर पाये गये हैं इसलिये इसके विभिन्न भागों का विविध प्रकार से उपयोग किया जाता है। सहजन का उपयोग आज के समय में भोजन, दवा, पशुचारा आदि कार्यों में किया जाता है। सहजन में प्रचुर मात्रा में विटामिन एवं पोषक तत्व पाये जाते हैं। सहजन का फूल, फल और पत्तियों का भोजन के रूप में व्यवहार होता है। इसकी छाल, पत्ती, बीज, गोंद, जड़ आदि से आयुर्वेदिक दवाएँ तैयार की जाती है। सहजन के पत्ती मवेशियों के चारा के रूप में इस्तेमाल किया जाता है।

जानिए सहजन की अच्छी किस्मों के बारे में

सहजन की वर्ष में दो बार फलने वाले प्रभेदों में पी.के. एम.1, पी.के.एम.2, कोयम्बटूर2 प्रमुख हैं. इसका पौधा 4–6 मीटर ऊँचा होता है और 90–100 दिनों में इसमें फूल आता है। जरूरत के अनुसार विभिन्न अवस्थाओं में फल की तुड़ाई करते रहते हैं। पौधे लगाने के लगभग 160–170 दिनों में फल तैयार हो जाता है। साल में एक पौधा से 65–70सें.मी. लम्बा तथा औसतन 6.3सेंमी. मोटा, 200–400 फल (40–50 किलोग्राम) मिलता है। यह काफी गूदेदार होता है तथा पकने के बाद इसका 70 फीसदी भाग खाने योग्य होता है.एक बार लगाने के बाद से 4–5वर्षो तक इससे फलन लिया जा सकता है। प्रत्येक वर्ष फसल लेने के बाद पौधे को जमीन से एक मीटर छोड़कर काटना आवश्यक है।

बुवाई का समय

एक महीने के तैयार पौध को पहले से तैयार किए गये गड्ढों में माह जुलाई–सितम्बर तक रोपनी कर दें।

बीज की मात्रा

एक हेक्टेयर में खेती करने के लिए 500 ग्राम बीज पर्याप्त है।

पौधे लगाने की विधि

सहजन के पौध की रोपनी गड्ढा बनाकर किया जाता है. खेत को अच्छी तरह खरपतवार मुक्त करने के बाद 2.5 x 2.5 मीटर की दूरी पर 45 x 45 x 45सेंमी. आकार का गड्ढा बनाते हैं। गड्ढे के ऊपरी मिट्टी के साथ 10 किलोग्राम सड़ा हुआ गोबर का खाद मिलाकर गड्ढे को भर देते हैं. इससे खेत पौध के रोपनी के लिए तैयार हो जाता है। सहजन में बीज और शाखा के टुकड़ों दोनों प्रकार से ही प्रबर्द्धन होता है। अच्छी फलन और साल में दो बार फलन के लिए बीज से प्रबर्द्धन करना जरुरी होता है।

बीज उपचार

नर्सरी में बीज बुवाई से पूर्व ट्राईकोडर्मा या कार्बन्डाजिम फफूंदनाशक की 5 से 10 ग्राम मात्रा प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करना चाहिए।

जलवायु

सहजन के पौधे का हरा–भरा व काफी फैलने वाले विकास के लिए सामान्यतः 25–30 डिग्री औसत तापमान अनुकूल होता है। यह ठंड को भी सहता है। परन्तु पाला से पौधों को नुकसान होता है। फूल आते समय 40 डिग्री से ज्यादा तापमान पर फूल झड़ने लगता है। कम या ज्यादा वर्षा से पौधे को कोई नुकसान नहीं होता है। यह विभिन्न पारिस्थितिक अवस्थाओं में उगने वाला एक ढीठ स्वभाव का पौधा है।

जून से सितंबर में लगाएं पौधा

बीज को सीधे तैयार गड्ढों में या फिर पॉलीथीन बैग में तैयार कर गड्ढों में लगाया जा सकता है। पॉलीथीन बैग में पौध एक महीना में लगाने योग्य तैयार हो जाता है। एक महीने के तैयार पौध को पहले से तैयार किए

(शेष पृष्ठ 21 पर)

*शोध छात्र, सब्जी विज्ञान विभाग, उद्यान महाविद्यालय, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या
**शोध छात्र,फल विज्ञान विभाग, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय नवाबगंज, कानपुर

मृदा में फसल अवशेष प्रबन्धन का प्रभाव

नन्दन सिंह* एवं वी.पी. चौधरी**

विभिन्न प्रकार की फसलें जब पक कर के काटने योग्य हो जाती हैं तब हमारे किसान भाई कंबाईन की सहायता से काट लेते है उसके उपरांत जो घास, फूस, ठूंठ और पुआल या डंठल खेत में रह जाता है उसे ही फसल अवशेष कहते है ।

इस मशीनीकरण के युग में जहां किसानों के खेती बाड़ी को करना आसान कर दिया वही पर इसका दुष्प्रभाव भी देखने को मिल रहा है। लगभग दो दशक से हमारे किसान भाई फसल को कंबाइन की सहायता से काट लेते थे और उसके बचे अवशेष को उसी खेत में जला दिया करते थे। उसके परिणामस्वरूप ग्लोबल वार्मिंग, प्रदूषण आदि से ले कर के मृदा की भौतिक, रसायनिक और जैविक क्रियाएं भी प्रभावित हुई, चाहे जैसे मृदा में रहने वाले लाभदायक जीवाणु, मृदा की उर्वरता, मृदा का तापमान या फसल की उत्तपादकता आदि।

धन्य है हमारे देश के कृषि वैज्ञानिक जिन्होंने फसल अवशेष प्रबन्धन की आवश्कता को समझते हुऐ नई नई टेक्नोलॉजी इजाद की और विनिन्न प्रकार के डिकंपोजर तैयार किए जिससे किसान भाईयों के फसल अवशेष को आसानी से उसी खेत में सड़ाया जा सके और इतना ही नही हमारे कृषि वैज्ञानिक ने किसानों और पर्यावरण को ध्यान में रखते हुए माननीय प्रधानमंत्री जी के द्वारा 2022 तक किसानों की आय दोगुना हो और किसान समृद्ध बने इसके लिए भारत सरकार के अंतर्गत कृषि कल्याण मंत्रालय से विभिन्न प्रकार के फसल अवशेष सम्बन्धित यंत्र को खरीदने के लिए 50 प्रतिशत छूट तथा इसकी एजेंसी लेने के लिए 80 प्रतिशत तक छूट का प्रावधान भी किया है।

किसान भाईयों को अधिक से अधिक जानकारी हो यंत्रों का लाभ मिले इसके लिए हमारे कृषि वैज्ञानिक किसान कल्याण मंत्रालय द्वारा संचालित फसल अवशेष प्रबन्धन प्रोजेक्ट के द्वारा बखूबी अपनी जिम्मेदारी निभा रहे हैं।

फसल अवशेषों को हमारे किसान भाई विभिन्न प्रकार से उपयोग कर मृदा में जीवांश पदार्थ की मात्रा बढ़ा सकते हैं जैसे

- हमारे किसान भाई आधुनिक कृषि यंत्र जैसे सुपरस्टार मैनेजमेंट सिस्टम, स्क्वायर बैलर, पैड़ी स्ट्रॉ चॉपर, मल्चर कटर कम स्पाइडर हाइड्रोलिक रिवर्सिबल रोटरी शलेशर आदि का प्रयोग कर सकते हैं।
- वर्तमान समय में इस कार्य के लिए रोटरी स्लेशर , मलचर आदि से खेत को तैयार करते समय एक बार में ही फसल अवशेष को बारीक टुकड़े में काट कर मिट्टी में मिला देना काफी आसान हो गया है ।
- धान के बाद बचे हुऐ ठूंठ खेत में नमी होने की अवस्था में सीधे जीरो ड्रिल, हैप्पी सीडर ,सुपर सीडर मशीन से बुआई करने से धान के ठूठ कुछ दिन बाद सड़ कर खाद बन जाता है ।
- बेस्ट डी कंपोजर का फसल की कटाई के बाद खेत में बचे हुए डंठल व अन्य अवशेष पर छिड़काव कर देने से अवशेष सड़ जाता है।
- फसल अवशेष प्रबंधन हमारे किसान भाईयों के लिए फायदेमंद तो है ही लेकिन उसका प्रयोग वहा करें जहा पशुओं के लिए चारे की कमी न हो।
- खरीफ, रबी और जायद की फसल की कटाई के बाद बचा हुआ जड़, तना और पत्ती के रूप में जो पदार्थ मृदा के अंदर और बाहर उपलब्ध हो उसमे 40 से 50 किलोग्राम यूरिया का छिड़काव कर देने से 25 से 30 दिन के अंदर सड़ जाता है जिससे मृदा में पोषक तत्व की प्राप्ति हो जाती है, जिसका उत्पादन पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

*विषय वस्तु विशेषज्ञ, कृषि विज्ञान केन्द्र, बहराइच प्रथम, **विषय वस्तु विशेषज्ञ, (फसल सुरक्षा), प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या

फसल अवशेष प्रबन्धन का मृदा पर प्रभाव

फसल अवशेष प्रबन्धन का मृदा पर विभिन्न प्रकार का प्रभाव पड़ता हैं जो कि हमारे किसान भाईयों के लिए संजीवनी का काम कर रहा है यदि हमारे किसान भाई फसल अवशेष खेत में सड़ाने से निम्न फायदे होंगे

1. कार्बनिक पदार्थ की उपलब्धता में वृद्धि –:

- किसान अगर फसल अवशेष को उसी खेत में यंत्रों की सहायता से काट कर मिला दे सड़ने के तदुपरांत कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ जाती है। कार्बनिक पदार्थ का मृदा में वही महत्व है जो मानव के रक्त में ऑक्सीजन का।
- जिस तरह यदि मानव के रक्त में ऑक्सीजन न हो तो जीवन संभव नही ठीक उसी प्रकार से यदि मृदा में कार्बनिक पदार्थ न हों तो किसी भी फसल का उत्त्पादन संभव नहीं अर्थात हर एक तत्व का मृदा में अपना अलग–अलग महत्व है। फसल अवशेष सड़ने के तदुपरांत कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ जाती है। इसी लिए सतत और अधिक उत्तपादन होता रहे, इसके लिए आवाश्यक है की मृदा में कार्बानिक पदार्थ की मात्रा बनी रहे। किसी भी फसल का फसल अवशेष, उस फसल का लगभग 1.29 गुना होता है इसमें 50 प्रतिशत तक नाइट्रोजन होती है साथ ही अन्य पोषक तत्व भी होते हैं।

2. मृदा के भौतिक गुण में सुधार

फसल अवशेष प्रबंधन से मृदा के भौतिक गुणों में सुधार होता है जैसे मृदा गठन, मृदा संरचना, मृदा रंधरावकाश, स्थूल घनत्व और मृदा रंग आदि पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

3. मृदा में लाभदायक जीवाणु में वृद्धि

मृदा में लाभदायक जीवाणुओं (मित्र कीट) की संख्या में आशातीत वृद्धि होती है जो कि खेत में पाए जाने हानिकारक जीवाणुओं को खा के नष्ट कर देते हैं और मृदा के दशा और दिशा में सुधार होता है ।

4. मृदा की उर्वरा शक्ति में वृद्धि

- कहा जाता है स्वस्थ धरा, स्वस्थ आहार, स्वस्थ पोषण फसल अवशेष प्रबन्धन करने से मृदा में पाए जाने वाले हानिकारक अवयव में कमी और लाभदायक तत्वों में वृद्धि होती है जिसके परिणाम स्वरूप ऊपर लिखा हुआ स्लोगन चरितार्थ होता है।
- फसल अवशेष प्रबंधन से मृदा में उर्वरा शक्ति की वृद्धि होने के साथ साथ मृदा का पीएच, ईसी ,नमी जल धारण क्षमता आदि फसल के लिए अनकूल हो जाता हैं। हम कह सकते हैं की इससे खेत की रासायनिक भौतिक दशा में सुधार होता है।

5. मृदा तापमान में कमी

फसल अवशेष प्रबंधन से मृदा से नमी का ह्रास कम होता है जिसके परिणाम स्वरूप मृदा के तापमान में कमी आती है जो कि फसलों की वृद्धि और विकास के लिए अच्छा माना जाता है।

6. फसल उत्पादकता में वृद्धि

फसल अवशेष प्रबन्धन में फसल उत्तपादन में आशातीत वृद्धि होती है जो कि किसान भाईयों के आय बढ़ाने में अहम भूमिका निभाता हैं। इस प्रकार से बहुत से फायदे मृदा को भी होते है अगर हमारे किसान भाई समुचित फसल अवशेष प्रबंधन को अपनाए।

किसान भाइयों,

लगातार फसल उगाने से मृदा के स्वास्थ्य में हो रही गिरावट के कारण कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता में स्थिरता की स्थिति हो गयी है। समय रहते खेत की मिट्टी की दशा को सुधारने एवं उर्वरकों का संतुलित मात्रा में प्रयोग करने के लिए आवश्यक है कि किसान भाई अपने खेत की मिट्टी की जाँच करवाने के प्रश्चात संस्तुति मात्रा में सुंतुलित उर्वरक का प्रयोग करें तथा मृदा स्वास्थ्य कार्ड अवश्य बनवायें। फसल अवशेष को न जलाएं उसका प्रबन्ध कर मृदा स्वास्थ्य को बढ़ाएं। खेत को खाली न छोड़ें बल्कि हरी खाद हेतु सनई व ढैचा पलटकर हरी खाद बनायें। जीवांशिक खादों का अधिक से अधिक प्रयोग कर मृदा स्वास्थ्य को बढ़ाने पर बल दें।

तिलहनी फसलों के खरपतवार एवं उनकी रोकथाम

हेमन्त कुमार सिंह* एवं राहुल सिंह रघुवंशी**

भारत में उगायी जाने वाली फसलों में तिलहनी फसलों का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। तिलहनी फसलें खाद्य तेल एवं औद्योगिक उपयोग के प्रमुख स्रोत हैं। तिलहनी फसलों में मुख्यतः मूंगफली, सोयाबीन, तिल, रामतिल एवं अरण्डी की खेती खरीफ मौसम में, सरसों, तोरिया, कुसुम एवं अलसी की खेती रबी मौसम में तथा सूरजमुखी की खेती खरीफ, रबी एवं जायद तीनों मौसम में की जाती है। हमारे देश में तिलहनी फसलों की खेती करीब 2 करोड़ 54 लाख हेक्टेअर क्षेत्रफल में की जाती है। जिनसे लगभग 1 करोड़ 83 लाख टन तिलहन उत्पादन होता है। लेकिन प्रति हे0 औसत पैदावार (719 किग्रा0) अन्य देशों की तुलना में बहुत कम है। खाद्य तेलों के भारी आयात के वावजूद भी वर्तमान समय में हमारे देश में खाद्य तेलों की आम खपत 10 किग्रा0 प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष है जबकि यूरोप के देशों में यह मात्रा 22–24 किग्रा0 प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष है। पोषण विज्ञानियों के अनुसार हमारे संतुलित आहार में 30–35 ग्राम चिकनाई जरूरी है। तिलहनी फसलों की पैदावार कम होने के अनेक कारण हैं जिनमें प्रमुख हैं–

तिलहनी फसलों की खेती मुख्यतः असिंचित क्षेत्रों में की जाती है, जहाँ पर नमी एवं पोषक तत्वों की कमी होती है। किसानों में तिलहनी फसलों की खेती की तकनीकी की जानकारी का अभाव एवं उन्नतशील प्रजातियों/किस्मों के बीजों की अनुपलब्धता। संतुलित पोषण (उर्वरकों) एवं यथोचित सस्य प्रबन्धन न करना। कीट व्याधियों, बीमारियों तथा खरपतवारों का उचित समय पर समुचित नियंत्रण न कर पाना, आदि।

असिंचित क्षेत्रों में, खरपतवार तिलहनी फसलों से तीव्र प्रतिस्पर्धा करके भूमि में निहित नमी एवं पोषक तत्वों के अधिकांश भाग को शोषित कर लेते हैं, फलस्वरूप फसल की विकास गति धीमी पड़ जाती है तथा पैदावार कम हो जाती है। खरपतवारों की रोकथाम से न केवल तिलहनों की पैदावार बढ़ाई जा सकती है, बल्कि तेल की प्रतिशत मात्रा में भी बृद्वि की जा सकती है।

खरपतवारों से हानियांः

खरीफ मौसम में उच्च तापमान व अधिक नमी के कारण रबी मौसम की अपेक्षा अधिक खरपतवार उगते हैं। यदि समय पर इनकी रोकथाम न की गयी तो इनसे पौधों की बढ़वार काफी कम हो सकती है, जिससे इसकी उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। खरपतवार फसलों के लिए भूमि में निहित पोषक तत्वों एवं नमी का एक बड़ा हिस्सा शोषित कर लेतें हैं तथा साथ ही साथ फसल को आवश्यक प्रकाश व स्थान से भी बंचित रखते हैं। इसके अतिरिक्त खरपतवार फसलों में लगने वाले रोगों एवं कीट व्याधियों को भी आश्रय देते हैं। कुछ खरपतवारों के बीज फसल के बीज के साथ मिलकर उसकी गुणवत्ता को कम कर देते हैं। जैसे सत्यानाशी खरपतवार के बीज सरसों के बीज के साथ मिलकर तेल की मात्रा एवं असकी गुणवत्ता को कम कर देते हैं। विभिन्न तिलहनी फसलों के पैदावार में खरपतवारों द्वारा आंकी गयी कमी का विवरण सारणी–1 में दिया गया है।

खरपतवारों की रोकथाम कैसे करें

तिलहनी फसलों में खरपतवारों की रोकथाम निम्नलिखित विधियों से की जा सकती है–

निवारक विधि

इस विधि में वे क्रियाएं शामिल हैं जिनके द्वारा खेतों में खरपतवारों के प्रवेश को रोका जा सकता है जैसे–प्रमाणित बीजों का प्रयोग, अच्छी सड़ी गोबर या कम्पोस्ट खाद का प्रयोग, सिंचाई की नालियों की सफाई, खेत की तैयारी और बुवाई में प्रयोग किए जाने वाले यंत्रों के प्रयोग से पूर्व अच्छी तरह से सफाई आदि।

फसल की निगरानी

फसल में खरपतवार के आक्रमण की जानकारी जानने के लिए लगातार खेत की निगरानी करते रहना आवश्यक है। फसल की बुवाई के बाद प्रत्येक सप्ताह कम से कम एक बार निरीक्षण करना अति आवश्यक होता है।

यांत्रिक विधि

खरपतवारों पर काबू पाने की यह एक सरल एवं प्रभावी विधि है। तिलहनी फसलों की प्रारम्भिक अवस्था में बुवाई के 15 से 45 दिन के बीच का समय खरपतवारों की प्रतियोगिता की दृष्टि से क्रांतिक समय है। अतः प्रारम्भिक अवस्था में ही तिलहनी फसलों को खरपतवारों से मुक्त रखना अधिक लाभदायक है।

*सह प्राध्यापक, **शोध छात्र, पादप रोग विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

सामान्यतः दो बार निराई–गुड़ाई, पहली बुआई के 20–25 दिन बाद तथा दूसरी 40–45 दिन बाद करने से खरपतवारों का प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता है।

रासायनिक विधि

तिलहनी फसलों में खरपतवारनाशी रासायनों का प्रयोग करके भी खरपतवारों को नियंत्रित किया जा सकता है। इससे प्रति हेक्टेयर लागत कम आती है तथा समय की भारी बचत होती है। लेकिन इन रसायनों का प्रयोग करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि इनका प्रयोग उचित मात्रा में उचित ढ़ग से तथा उपयुक्त समय पर हो अन्यथा लाभ के बजाय हानि की संम्भावना रहती है। विभिन्न तिलहनी फसलों में प्रयोग किए जाने वाले खरपतवारनाशी रासायनों का विस्तृत विवरण सारणी–2 में दिया गया है।

प्रयोग विधि

खरपतवारनाशी की आवश्यक मात्रा को 500–600 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हे0 की दर से छिड़काव करें।

खरपतवारनाशी रसायनों के प्रयोग में सावधानियां

प्रत्येक खरपतवारनाशी के डिब्बों पर लिखे निर्देशों तथा उसके साथ दिए गए पर्चों को ध्यानपूर्वक पढ़ें तथा दिए गए तरीकों का विधिवत पालन करें।

- खरपतवारनाशी रसायन का संस्तुत मात्रा में तथा उचित समय पर छिड़काव करना चाहिए।
- सिर्फ उन्ही खरपतवारनाशी रसायनों का छिड़काव करना चाहिए जो कि सिर्फ खरपतवार को मारते हों फसल को नहीं। साथ– साथ यह भी ध्यान रहे कि यह खरपतवारनाशक लाभदायक कीटों एवं जैविक नियन्त्रकों को कोई हानि नहीं पहुँचाते हों।
- बुवाई से पहले या बुवाई के तुरन्त बाद प्रयोग किए जाने वाले रसायनों को प्रयोग करते समय भूमि में पर्याप्त नमी होनी चाहिए।
- खरपतवारनाशी का छिड़काव पूरे खेत में समान रूप से करें।
- छिड़काव करते समय नाक व मुंह को कपड़े से ढंक लेना चाहिए एवं तम्बाकू धूम्रपान एवं नशीले पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिए।
- खरपतवारनाशी का छिड़काव शांत दिनों तथा साफ मौसम में करना चाहिए।
- छिड़काव करते समय या तुरन्त बाद पशुओं/मजदूरों को खेत में नहीं जाने देना चाहिए।
- प्रयोग करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि रसायन शरीर पर न पड़े। इसके लिए विशेष पोशाक, दस्ताने तथा चश्में इत्यादि का प्रयोग करना चाहिए तथा प्रयोग किए गए उपरोक्त वस्त्रों को साबुन से धोकर धूप में सुखाना चाहिए।
- छिड़काव कार्य समाप्त होने के बाद हाथ, मुंह, साबुन से अच्छी तरह धो लेना चाहिए तथा अच्छा हो यदि स्नान भी कर लें।

सारिणी–1

तिलहनी फसलें	खरपतवारों की प्रतिस्पर्द्धा का क्रांतिक समय	उपज में कमी (प्रतिशत में) (बुवाई के बाद दिन)
मूंगफली	40–60	40–50
सोयाबीन	15–45	40–50
सूरजमुखी	30–45	33–50
अरण्डी	30–60	30–35
कुसुम	15–45	35–60
तिल	15–45	17–41
रामतिल	15–45	35–60
सरसों	15–40	15–30
अलसी	20–40	30–40

सारणी–2

तिलहनी फसलें	खरपतवारनाशी रसायन	मात्रा (ग्राम सक्रिय पदार्थ/हे0)	प्रयोग का समय
खरीफ मौसम की तिलहनी फसलें (मूंगफली, सोयाबीन, तिल, रामतिल आदि)	फ्लूक्लोरेलिन	1000–1500	बुवाई के पहले छिड़काव करके भूमि में अच्छी तरह से मिला दें।
	ट्राईफ्लूरालिन	1000–1500	तदैव
	पेन्डीमिथलिन	1000	बुवाई के बाद परन्तु अंकुरण से पूर्व
	एलाक्लोर	1000–1500	तदैव
रबी मौसम की तिलहनी फसलें (कुसुम, राई–सरसों, तोरिया एवं अलसी आदि)	पेन्डीमिथलिन	750–1000	बुवाई के बाद परन्तु अंकुरण से पूर्व
	एलाक्लोर	1000–1500	तदैव
	फ्लूक्लोरेलिन	1000–1500	बुवाई के पहले छिड़काव भूमि में अच्छी तरह से मिला दें।
	क्लोडिनोफाप	60	बुवाई के 30–35 दिन बाद
	क्यूजॉलोफाप	50	तदैव

खरीफ की दलहनी फसलों में 'कीट रोग प्रबंधन'

संदीप कुमार* एवं संजीत कुमार**

दलहनी फसलें मानव स्वास्थ्य के लिए बहुत ही आवश्यक हैं, क्योंकि इसमें 20 से 22 प्रतिशत प्रोटीन के अलावा रेशा, विटामिन, खनिज लवण जैसे–लौह, मैगनिशियम, फॉस्फोरस, जिंक आदि पाया जाता है। जैसा हमें ज्ञात है कि दलहनी फसलों में नत्रजन स्थिरीकरण का नैसर्गिक गुण होने के कारण वायुमण्डलीय नत्रजन को अपनी जड़ों में स्थिर करके मृदा उर्वरता को बढ़ाती है। भारत वर्ष में दलहन की खेती लगभग 25.0 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल में की जाती है तथा 19.27 मिलियन टन उत्पादन प्राप्त होता है। खरीफ की दलहनी फसलों में मुख्य रूप से अरहर, उर्द, मूँग इत्यादि की खेती प्रमुख रूप से की जाती है। खरीफ दलहनी फसलों में अरहर, उर्द व मूँग प्रमुख हैं। इन फसलों में कई प्रकार के कीटं व व्याधियों का प्रकोप होता है, जिससे दलहन का उत्पादन अधिक प्रभावित होता है। खरीफ दलहनी फसलों में लगने वाले कीट व रोगों का समेकित प्रबंधन निम्न प्रकार है।

अरहर के प्रमुख कीट

फली छेदकः– अरहर की फसल में कई प्रकार के फली छेदक आक्रमण करते हैं जैसेः– चने का फली छेदक, धारीदार छेदक, धब्बेदार छेदक इत्यादि। यह कीट अरहर की फसल को बहुत नुकसान पहुंचाता है। छोटी सूँड़ियां अण्डो से निकलने के बाद अरहर की कलियों एवं फलियों को खाती हैं। बड़ी होने पर सूड़ियां फलियों में गोल छेद बनाकर अंदर दानों को खाती हैं और छिद्रों के ऊपर इनका मल लगा हुआ रहता है।

फली मक्खीः– अरहर को इस कीट से सबसे अधिक नुकसान होता है। फली मक्खी अपना अण्डा ज्यादातर छोटी व मुलायम फलियों के अन्दर देती है। अण्डों से निकलने के बाद बिना पैर वाली सूड़ियां दानों के अन्दर सुरंग बनाकर खाती हैं। तीन अवस्थाओं को पार करके लगभग 6–15 दिन में प्यूपा में बदल जाती हैं प्यूपा का समय लगभग 8–25 दिनों का होता है। इसके बाद मक्खी फली में छेद करके बाहर आ जाती है।

प्ल्यूम मॉथः–इस कीट की सूंड़ियां छति पहुॅचाती हैं, जो फलियों के ऊपर चिपकी हुई पायी जाती हैं। सूड़ियों के ऊपर छोटे–छोटे रोयें पाये जाते हैं। ये कीट फलियों के अलवा अरहर की कलियों एवं फूलों को भी खाते हैं जिसपर छोटे–छोटे छिद्र भी दिखाई देते हैं।

फली बगः–इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ दोनों पौधों के पत्तियों, तनों एवं फलियों मे सूंड़ की सहायता से रस चूसते हैं। फलस्वरूप फलियां पीली हो जाती हैं और दाने बहुत छोटे हो जाते हैं।

अरहर के प्रमुख रोग

उकठा रोगः अरहर की फसल का यह एक हानिकारक रोग है, जो फ्यूजेरियम नामक फफूँद से फैलता है। इस रोग के कारण पौधों में पानी एवं खाद्य पदार्थों का संचार रूक देता है, जिससे पत्तियॉ पीली पडकर सूख जाती हैं और पौध सूख जाता है। जड़े सड़कर गहरे रंग की हो जाती हैं तथा छाल हटाने पर जड़ से लेकर तने की उचाई तक काले रंग की धारियॉ पायी जाती हैं।

बंझा रोगः यह रोग माईट (अश्टपदी) के द्वारा फैलता है। इस रोग से ग्रसित पौधों में पत्तियॉ अधिक लगती हैं, जो छोटी तथा हल्के रंग की दिखाई देती हैं। पौधों में फूल नहीं आते, जिससे फलियॉ तथा दाना नहीं बनता।

एकीकृत प्रबंधन

- ग्रसित पौधों एवं खरपतवार अवशेषों को नष्ट करते रहना चाहिए।
- नीम की खली 2 क्विंटल/हेक्टेयर की दर से खेत में प्रयोग करना चाहिए।
- फली भेद कीट के लिए जब फसल 60–65 दिन (सितम्बर–अक्टूबर) की हो जाए तब गन्धपास (फेरोमोन ट्रैप) का उपयोग करना चाहिए। एक से दूसरे गंधपास की दूरी 30 मीटर होनी चाहिए तथा फसल से 1–2 फिट ऊपर रहे।

*विषय वस्तु विशेषज्ञ, पादप सुरक्षा, **वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र, जौनपुर–2 आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्यौगिक विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या

14 दिन के अन्तराल पर ल्योर आवश्यकता अनुसार बदलते रहना चाहिए तथा उसपर आकर्षित नर प्रौढ़ कीट को नष्ट कर देना चाहिए।

- 250 एल0 ई0 एन0 पी0 वी0 + 0.1 प्रतिशत टीनोपाल/हे0 की दर से छिड़काव करें।
- यदि कीट नियंत्रण सही तरीकें से नही हो पा रहा हो तो, 50 प्रतिशत फूल एवं 50 प्रतिशत फलियां बनने के समय इन्डाक्साकार्ब 14.5 एस0सी0 1.0 मिली0 अथवा क्वीनालफॉस 2.0 मिली0 अथवा स्पाइनोसेड 45 प्रतिशत एस0पी0 0.5 मिली0 अथवा इमामेक्टिन बेंजोएट 5 प्रतिशत एस0जी0 0. 5 ग्राम कीटनाशक प्रति ली0 की दर से छिड़काव करें।
- जिस खेत में उकठा रोग अथवा तना विगलन की समस्या हो तो उस खेत में 3–4 वर्ष का फसल चक्र अपनाना चाहिए।
- बंझा रोग नियंत्रण हेतु मिल्वीमेक्टिन दवा की 1 मिली या प्रोपारगाईट की 3 मिली0/लीटर की दर से घोल बनाकर 2–3 छिड़काव 10–12 दिनों के अन्तराल पर करना चाहिए।

उर्द व मूंग के हानिकारक कीट

सफेद मक्खीः इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ दोनों पौधों से रस चूसते हैं, जिससे पौधा कमजोर हो जाता है। यह कीट फसल पर मधुस्राव छोड़ता है, जिसपर बाद में काले रंग की फफूंद उग आती है, जिसके कारण प्रकाश संश्लेषण क्रिया सुचारू रूप से न होने से पौधे का विकास अवरूद्ध हो जाता है। इसके अलावा यह कीट हानिकारक विषाणु को भी स्थानान्तरित करता रहता है, जिससे पीला चितेरी रोग उत्पन्न हो जाता है। पौधे की बढ़वार रूक जाती है और उत्पादन में काफी गिरावट आ जाती है।

फुदकाः यह कीट छोटे–छोटे हरे रंग के होते हैं और पत्तियों के निचली सतह पर अधिकतर पाये जाते हैं। इसके शिशु एवं प्रौढ़ दोनों पौधों से रस चूसते हैं, जिससे पौधों की पत्तियां सिकुड़ने लगती हैं और फसल की बढ़वार रूक जाती है।

फली छेदकः उर्द, मूंग जैसी दलहनी फसलों में भी कई प्रकार के फली छेदक पाये जाते हैं जिनकी सूड़ियां पौधों को काफी नुकसान पहुॅचाती हैं। सूड़ियॉ उर्द, मूॅग की पहले पत्तियों को खाती हैं, बाद में जैसे ही फलियॉ बनना प्रारम्भ होती हैं, तो फलियों को छेदकर उनके विकसित हो रहे दानों को खाती जाती हैं।

थ्रिप्स कीटः इसके शिशु एवं प्रौढ़ पत्तियों एवं फूलों का रस चूसते हैं, जिससे पत्तियॉ सिकुड़ जाती हैं, तथा फूल मुड़ने लगते हैं एवं गिर जाते हैं फलस्वरूप फलियॉ कम लगती हैं।

उर्द व मूंग के प्रमुख रोग

पीला चितेरी रोगः यह एक विषाणु जनित रोग है, जो सफेद मक्खी द्वारा फैलाया जाता है। रोगग्रसित पौधों की पत्तियों पर पीले रंग चकत्ते पाये जाते हैं। रोग की उग्र अवस्था में पूरा पौधा पीला पड़ जाता है। रोगी पौधों में फूल एवं फलियॉ या तो नहीं बनतीं या बहुत कम लगती हैं और दाने सिकुड़कर छोटे हो जाते हैं।

धब्बा रोगः यह एक फफूॅद जनित रोग है। पत्तियों पर भूरे रंग के गोलाई लिए हुए कोणिय धब्बे बनते हैं जिसमें बीच का भाग हल्के राख के रंग का या हल्का भूरा तथा किनारा लाल बैंगनी रंग का होता है। अधिक प्रभावित पौधों की पत्तियॉ गिर जाती हैं और फलियों पर धब्बों के बनने से उनका रंग काला पड़ जाता है एवं बीज सिकुड़कर हल्के हो जाते हैं।

पर्णकुंचन रोगः यह रोग माहूॅ कीट के द्वारा फैलता है। इस रोग में पत्तियों की सामान्य से अधिक वृद्धि हो जाती है तथा बाद में इनमें सिलवटें या मरोड़ पड़ जाता है। पत्तियॉ छूने पर सामान्य पत्तियों से अधिक मोटी तथा खुरदुरी प्रतीत होती हैं।

एकीकृत प्रबंधनः–

- अन्तरासस्यन के तहत उर्द व मॅूग की बुवाई ज्वार व बाजरा के साथ करें।
- कुछ कीटों के अण्डों व सूड़ियों को हाथ से पकड़कर नश्ट कर दें।
- खरपतवार एवं कीट रोग ग्रसित पौधों को नष्ट करते रहना चाहिए।
- सफेद मक्खी व फूदका कीट जो पौधे की शुरूआती अवस्था से ही नुकसान करते हैं, इसके लिए खेत में कार्बोफ्यूरॉन 3 जी0 18–20 किग्रा प्रति हे0 की दर से प्रयोग करें।
- नीम आधारित उत्पादों जैसे–नीम बाण, नीम गोल्ड, अचूक, निमिन आदि की 3–4 मिली0/लीटर पानी या नीम बीज सत की 5 मिली0/ली0 पानी की दर

से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

- फली छेदक कीट नियंत्रण हेतु इण्डाक्साकार्व 15.8 प्रतिशत ई0सी0 की 1 मिली0 या स्पाइनोसैड 45 प्रतिशत एस0पी0 0.5 मिली या इमामेक्टिन बेंजोएट 5 प्रतिशत एस0जी0.की 0.5 मिली0 प्रति लीटर पानी की दर से 50 प्रतिशत फूल आने तथा 50 प्रतिशत फली आने पर छिड़काव करना चाहिए। रस चूसक कीट सफेद मक्खी, थ्रिप्स, माहूँ के नियंत्रण हेतु इमिडाक्लोरप्रिड 17.8 प्रतिशत एस0एल0 की 3 मिली0/10लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए।

पर्णदाग रोग एवं अन्य फफूँद जनित रोग के नियंत्रण हेतु क्लोरोथैलोनील 75 प्रतिशत डब्ल्यू0पी0 की 2 ग्राम या कैब्रियोटॉप 60 प्रतिशत डब्ल्यू0जी0 की 1 ग्राम/लीटरपानी की दर से घोल बनाकर 2–3 छिड़काव 10 दिनों के अन्तराल पर करना चाहिए।

(पृष्ठ 14 का शेष)

गये गड्ढों में जून से लेकर सितम्बर तक रोपनी किया जा सकता है। पौधा जब लगभग 75सेंमी का हो जाये तो पौध के ऊपरी भाग को तोड़ देना चाहिए, इससे बगल से शाखाओं को निकलने में आसानी होगी।

भूमि

सहजन की खेती के लिए सभी तरह की मिट्टी अच्छी होती हैं, सहजन के ज्यादा उत्पादन के लिए काली, लैटराइट, गहरी बलई, बलुई दोमट या दोमट मिट्टी ज्यादा उपज देने वाली होती है। इसे खाली पड़ी जमीनों, बंजर व कम उपजाऊ वाली जमीनों में भी आसानी से उगाया जा सकता है।

खेत की तैयारी

नर्सरी में तैयार सहजन के पौधों को खेत में रोपने से पहले जोतकर मिट्टी को भुरभुरी बना लेना चाहिए। खेत की अच्छी तैयारी के लिए एक गहरी जुताई करने के बाद हैरो या कल्टीवेटर से 2 से 3 गहरी जुताइयां कर देनी चाहिए, इससे सहजन की जड़ों का मिट्टी में फैलाव सही होता है। खेत से खरपतवारों को निकाल देना चाहिए। सहजन के पौध की रोपनी गड्ढा बनाकर किया जाता है। इन गड्ढों में मिट्टी के साथ गोबर की सड़ी खाद मिलाकर भर देते हैं, गोबर की खाद को खेत में सीधे भी मिलाया जा सकता है।

खाद एवं रासायनिक उर्वरक

सहजन पर किए गए शोध यह पाया गया कि मात्र 15 किलोग्राम गोबर की खाद प्रति गड्ढा तथा एजोसपिरिलम और पी.एस.बी. (5 किलोग्राम/हेक्टेयर) के प्रयोग से जैविक सहजन की खेती, उपज में बिना किसी हानि के किया जा सकता है। रोपनी के तीन महीने के बाद रासायनिक उर्वरक के रूप में 100 ग्राम यूरिया + 100 ग्राम सुपरफास्फेट + 50 ग्राम पोटाश प्रति गड्ढा की दर से डालें तथा इसके तीन महीने बाद 100 ग्राम यूरिया प्रति गड्ढा का पुनः देना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

सजहन की खेती में खरपतवार की रोकथाम के लिए आवश्यकता अनुसार निराई गुड़ाई करना चाहिए।

सिंचाई

खेत में पौधों की रोपाई के तुरंत बाद पहली सिंचाई कर देनी चाहिए, पहली सिंचाई के एक हफ्ते बाद दूसरी सिंचाई व बाकी सिंचाई हर 15 दिन के अंतराल पर करनी चाहिए। फूल लगने के समय खेत ज्यादा सूखा या ज्यादा गीला रहने पर दोनों ही अवस्था में फूल के झड़ने की समस्या होती है।

फल की तुड़ाई

वर्ष में दो बार फल देने वाले सहजन की किस्मों की तुड़ाई सामान्यतः फरवरी–मार्च और सितम्बर–अक्टूबर में होती है। सहजन की तुड़ाई बाजार और मात्रा के अनुसार 1–2 माह तक चलता है। सहजन के फल में रेशा आने से पहले ही तुड़ाई करने से बाजार में मांग बनी रहती है और इससे लाभ भी ज्यादा मिलता है।

उत्पादन

प्रत्येक एक साल में एक पौधे से 65–70 सेंटीमीटर लंबा और औसतन 6.3 सैंटी मीटर मोटा, 200–400 फल 40–50 किलोग्राम की उपज मिलती है।

शिशुओ के लिए पूरक आहार

सरिता श्रीवास्तव* एवं सुमन प्रसाद मौर्य*

मां का दूध ही शिशु का सर्वोत्तम आहार होता है। किंतु जैसे–जैसे बच्चे की आयु बढ़ती जाती है, उसकी सभी पौष्टिक आवश्यकताएं माता के दूध से पूरी नहीं हो पाती है। अतः जब शिशु 6 माह का हो जाता है तो शिशु को मां के दूध के साथ साथ सब्जी, फल, दालों व अनाज से तैयार किया गया भोजन भी खिलाना प्रारम्भ कर देना चाहिए। बच्चे की पौष्टिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए मां के दूध के साथ दिया जाने वाला यह आहार पूरक आहार कहलाता है। जैसे सब्जियों का सूप, फलों का रस, दलिया, खिचड़ी, हलवा, लाई व गेहूं से निर्मित आहार आदि। यह आहार बच्चों के स्वास्थ्य के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। प्रायः माताओं के पास समय नहीं होता है कि वह बच्चे के लिए आवश्यकता अनुसार समय–समय पर ताजा पूरक आहार तैयार कर सकें इसलिए वह घर में बने सामान्य भोजन को ही अपने शिशु को भी खिलाती हैं । कभी–कभी घर के सामान्य भोजन में मिर्च, तेल, मसाला अधिक मात्रा में होने के कारण बच्चे इसे नहीं खा पाते हैं और वे भूखे रह जाते हैं। यदि बच्चे ऐसे भोजन को खाते हैं तो उनका स्वास्थ्य खराब होने की संभावना बनी रहती है। बच्चे दिन में कई बार थोड़ा–थोड़ा भोजन करते हैं, उनके लिए बार–बार ताजा भोजन तैयार करना भी संभव नहीं हो पाता है । यदि हमें अपने शिशु के लिए कोई ऐसा भोजन मिल जाए जिसे हम संग्रहित कर के रख सकें और आवश्यकता पड़ने पर तुरंत तैयार करके खिला सकें तो माता के लिए भी सुविधाजनक होगा और बच्चे को भी आवश्यकता अनुसार ताजा पोष्टिक भोजन प्राप्त हो जाएगा। ऐसे ही कुछ पूरक आहार तैयार करने की विधियां इस प्रकार हैं–––

गेहूं से निर्मित पूरक आहारकृ

सामग्री

1– गेहूं –600 ग्राम
2– मूंग की दाल (धुली हुई) –– 300 ग्राम
3– मूंगफली––75 ग्राम
4– तिल –– 75 ग्राम

विधि

- सर्वप्रथम ऊपर लिखी सभी सामग्रियों को अलग–अलग भूनेगे।
- इन भुनी सामग्रियों को अलग–अलग बारीक पीस लेंगे।
- पिसी सामग्रियों को आटा चलने वाली छलनी से छान लेंगे।
- फिर सभी को अच्छी तरह मिला देंगे और किसी हवा बंद डिब्बे में संग्रहित करेंगे जिससे नमी बिल्कुल ना जाने पाए। पौष्टिक पूरक आहार तैयार है।

लाई से निर्मित पूरक आहार

सामग्री

1– लाई–600 ग्राम
2– मूंग की दाल(धुली हुई)–300 ग्राम
3– मूंगफली–75 ग्राम
4– तिल– 75 ग्राम

विधिः–

- सर्वप्रथम ऊपर लिखी सभी सामग्रियों को अलग–अलग भूनेगे।
- इन भुनी सामग्रियों को अलग–अलग बारीक पीस लेंगे।
- पिसी सामग्रियों को आटा चलने वाली छलनी से छान लेंगे।
- फिर सभी को अच्छी तरह मिला देंगे और किसी हवा बंद डिब्बे में संग्रहित करेंगे जिससे नमी बिल्कुल ना जाने पाए । पौष्टिक पूरक आहार तैयार है।

रागी से निर्मित पूरक आहार

सामग्री

1– रागी –– 600 ग्राम
2– मूंग की दाल (धुली हुई)––300 ग्राम
3– मूंगफली––75 ग्राम
4– तिल––75 ग्राम

विधि

- सर्वप्रथम ऊपर लिखी सभी सामग्रियों को

(शेष पृष्ठ 25 पर)

*मानव विकास एवं परिवार अध्ययन विभाग, सामुदायिक विज्ञान महाविद्यालय, आ. न. दे.कृ.प्रो. वि.वि, कुमारगजं, अयोध्या (उ.प्र.)

दुधारू पशुओं में ब्यांत से सम्बन्धित प्रमुख समस्यायें एवं निदान

डी0के0 श्रीवास्तव* एवं एस0एन0 सिंह**

स्वस्थ पशु ही भविष्य के गाय/भैंस को जन्म देकर पशुपालन के व्यवसाय को लाभकारी बना सकते है क्योंकि पशुपालन का मुख्य उद्देश्य उससे अधिक दुग्ध उत्पादन एवं स्वस्थ बच्चे प्राप्त करना है। यह तभी सम्भव है जब मादा पशु ब्याने के बाद उचित समय पर पुनः गर्भधारण कर सके। दुधारू पशुओं (गाय एवं भैस) में उत्पादकता का माप उसके दो बच्चों के ब्यांत के अंतराल पर निर्भर करता है। यह अन्तराल 12–13 महीनों से अधिक नही होना चाहिए। इसके लिए यह आवश्यक है कि इनमें ब्याने के 75 से 80 दिन के अन्दर गर्भधारण हो जाना चाहिए। यदि यह अन्तराल इससे अधिक है तो इसका तात्पर्य है कि उस पशु को बच्चा देते समय या बच्चा देने के कुछ समय बाद जननांग सम्बन्धित कोई न कोई समस्या जरूर रही होगी। अतः पशु पालकों को इन समस्याओं के बारे में जानकारी होना अति आवश्यक है जिससे समय से उसका निदान हो सके और उनके दुधारू पशु बांझपन की समस्या से ग्रसित न हो सके। दुधारू पशुओं में ब्यांत एवं उसके बाद होने वाली प्रमुख समस्यायें निम्नवत् हैः–

1. बच्चे की असामान्य अवस्था

यह एक गम्भीर समस्या है जिसका निदान समय से एवं सही तरीके से नही किया गया तो पशुओं में अन्य गम्भीर समस्यायें उत्पन्न हो जाती है जिससे पशु को पुनः गर्भधारण करने में समस्या होती है। ब्यांत के सामान्य अवस्था में बच्चे का अगला भाग यानि उसका मुँह एवं दोंनों अगले पैर गर्भाश्य ग्रीवा एवं योनि मार्ग की तरफ होना चाहिए और गर्भाशय से बाहर की तरफ आना चाहिए। इसके अलावा कभी–कभी बच्चे का सिर गर्दन से बायीं या दायीं दिशा में घूम जाता है या उसका पैर घुटने व अन्य जोड से मुड जाता है जो असामान्य अवस्था कहलाता है। इस असामान्य अवस्था में गाभिन पशु द्वारा काफी जोर लगाने के बाद भी बच्चा गर्भाशय से बाहर नही निकलता है।

इसके अलावा कभी–कभी बच्चे का वजन एवं आकार सामान्य से ज्यादा हो जाता है या उसके सिर का आकार सामान्य से बडा हो जाता है। इस अवस्था को डिस्टोकिया कहते है। इसके निदान के लिए ब्यांत के समय यदि पानी की दूसरी थैली फटने के 2–3 घंटे के अन्दर बच्चा बाहर नही आता है तो तुरन्त पशुचिकित्सक से संम्पर्क करना चाहिए। देरी करने से माँ एवं बच्चे दोनों की मृत्यु हो सकती है। इस समस्या का निदान किसी अकुशल व्यक्ति से नही कराना चाहिए और बच्चे को बलपूर्वक नही खीचना चाहिए अन्यथा साधारण समस्या भी गम्भीर बन सकती है।

2. गर्भाशय का ऐंठन अथवा घूम जाना

यह समस्या गाय एवं भैस दोनो में पायी जाती है, परन्तु भैस में इसका प्रतिशत अधिक होता है। इस अवस्था में गर्भाशय मुख्य केन्द्र के दायीं अथवा बायीं दिशा में घूम जाता है जिसके कारण गर्भाशय ग्रीवा भी उसी दिशा में ऐंठ जाती है। यह अवस्था मुख्यतयः बायीं दिशा की अपेक्षा दायीं दिशा में अधिक पायी गयी है तथा गर्भावस्था के अन्तिम समय अथवा ब्यांत के समय होती है। इसका मुख्य कारण गाय या भैस का गर्भावस्था के अन्तिम महीनों में ऊचाई से गिरना या नदी, तालाब आदि में नहाने के लिए जाना है। इस प्रकार की समस्या से प्रभावित मादा पशु में ब्यांत से पहले कोई लक्षण नही दिखायी पडता है परन्तु गर्भावस्था का समय पूरा होने एवं ब्यांत के लक्षण शुरू होने पर पशु द्वारा ब्याने के लिये काफी जोर लगाने के बाद भी बच्चा गर्भाशय के बाहर नही निकलता है। अधिक समय तक जोर लगाने से पशु थक जाता है एवं सुस्त पड जाता है। यही इस समस्या की पहचान है परन्तु इसकी निश्चित पहचान गुदा परीक्षण द्वारा ही किया जाता है। इससे बचाव के लिए पशुपालकों को अपने दुधारू पशुओं का गर्भावस्था के अंतिम महीनों में विशेष ध्यान देना चाहिए। पशु को अकेले चारागाह में नही भेजना चाहिए। पशुओं में ब्यांत के लक्षण शुरू होने पर 2–3 घंटे में यदि बच्चा बाहर नही आता है तो तुरन्त पशुचिकित्सक को दिखाना चाहिए। इसमें देरी करने से बच्चे एवं माँ दोनो को जान का खतरा रहता है।

*विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशुविज्ञान), **प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र, बस्ती, आ.न.दे.कृ.प्रो.वि.वि, कुमारगजं, अयोध्या (उ.प्र.)

3. गर्भाशय का बाहर आना

पशुओं में ब्यांत के समय गर्भाशय का बाहर आना एक इमरजेन्सी अवस्था है। अतः इसका उपचार तुरन्त करवाना चाहिए अन्यथा पशु की मृत्यु हो सकती है। पशुओं में कैल्शियम की कमी, ब्याने के समय बच्चे का असामान्य अवस्था में होना, ब्याने के समय मादा जननांग के किसी भाग में जख्म होना आदि इसके मुख्य कारण है। इस समस्या की शुरूआत में गर्भाशय का थोडा भाग बाहर निकला दिखायी देता है परन्तु कुछ समय बाद पूरा गर्भाशय बाहर आ जाता है। जिसके कारण से गर्भाशय में रक्त संचार बाधित हो जाता है। ज्यादा समय बीत जाने पर उसमें सूजन आ जाती है और उसे अन्दर करना बहुत मुश्किल हो जाता है। बल पूर्वक अन्दर करने के प्रयास में अत्यधिक रक्तस्राव हो जाता है। इन सब समस्या से ग्रसित पशुओं में मृत्युदर अधिक होती है। इससे बचाव के लिए आवश्यक है कि ब्यांत के समय पशु के पास घर का एक सदस्य अवश्य मौजूद रहे। पशु के पिछले भाग को गनी बैग (जूट बोरी), अथवा भूसे भरे बोरे आदि की सहायता से ऊॅचा कर देना चाहिए। गर्भाशय का थोडा सा भाग दिखायी देने पर उसे ब्लीचिंग पाउडर के हल्के घोल से साफ करके अन्दर कर देना चाहिए। पशु को ज्यादा पानी एवं हरा चारा नही देना चाहिए और साफ सुथरे स्थान पर स्थानान्तरित कर देना चाहिए। यदि गर्भाशय का ज्यादा भाग बाहर आ गया हो तो उसे बर्फ के पानी में भीगे हुए कपडे से लपेट देना चाहिए और तुरन्त पशुचिकित्सक से सम्पर्क करना चाहिए।

4. मादा जननांग में संक्रमण

मादा जननांग में संक्रमण दो प्रकार से होते है। 1. ब्यांत के 8 से 10 दिन के अन्दर जिसे मेट्राइटिस कहते है। 2. ब्यांत के कुछ समय बाद जिसे इन्डोमेट्राइटिस कहते है। मेट्राइटिस में पशु को तेज बुखार रहता है, दाना–चारा खाना छोड देता है एवं योनि से लाल रंग का स्राव निकलता है। इस समस्या का मुख्य कारण ब्यांत के समय बच्चे की असामान्य अवस्था, जेर का रूकना (अटकना), बच्चे का गर्भ के अन्दर मृत्यु होना आदि है। इस प्रकार की समस्या होने पर पशु की मृत्यु भी हो जाती है क्योंकि इस समय गर्भाशय संक्रमण के लिए अति संवेदनशील होता है और गर्भाशय में रक्त का बहाव अधिक होता है जिसके कारण जीवाणु पशु के पूरे शरीर में फैल जाते है जो मृत्यु का कारण होता है। इन्डोमेट्राइटिस की समस्या 30–40 प्रतिशत पशुओं में पायी जाती है। इससे प्रभावित पशु गर्भधारण करने में असमर्थ होते है और बार–बार गर्मी के लक्षण प्रकट करते है। ऐसे पशुओं मे योनि मार्ग से सफेद या पीले सफेद रंग का स्राव निकलता है। सामान्यतः इसकी मात्रा कम होती है परन्तु जब पशु गर्मी पर होता है तब इसकी मात्रा बढ जाती है। यह एक समस्या है जो मादा पशुओं के गर्भधारण क्षमता को अत्यधिक प्रभावित करती है। यह समस्या मादा पशुओं में ब्यांत के समय प्राकृतिक गर्भाधान के समय सांड द्वारा अथवा कृत्रिम गर्भाधान के समय असावधानी एवं संक्रमित वीर्य से जननांग में संक्रमण के कारण होता है। इसके बचाव के लिए ब्यांत के लक्षण दिखायी देते ही पशुओं को साफ–सुथरे स्थान पर स्थानान्तरित कर देना चाहिए। पानी की दूसरी थैली फटने के 2–4 घंटे में यदि मादा पशु बच्चा नही देती है तो तुरन्त पशुचिकित्सक से जॉच करवानी चाहिए। यदि बच्चा असामान्य अवस्था में है और उसका कोई भाग (अंग) दिखाई दे रहा है तो उसे बलपूर्वक बाहर नही खींचना चाहिए अन्यथा जननांग के किसी भाग में घाव हो सकता है और गर्भाशय में संक्रमण होने की सम्भावना बढ जाती है। इन्डोमेट्राइटिस की रोकथाम के लिए प्राकृतिक गर्भाधान ऐसे सांड से कराये जो बीमारी से मुक्त प्रमाणित किया गया हो। कृत्रिम गर्भाधान सरकारी/प्रमाणित संस्था से परीक्षण किये हुए जीवाणु रहित वीर्य एवं कुशल व्यक्ति से ही कराना चाहिए जिससे गर्भाधान के समय होने वाले संक्रमण से बचा जा सके। पशुओं को बच्चा देने के लगभग एक माह तक एवं जब पशु गर्मी पर हो तो उन्हे तालाब में जाने से रोकना चाहिए।

पशुपालक ध्यान दे :–

1. खनिजों की पूर्ति हेतु 50 ग्राम खनिज लवण मिश्रण, 50 ग्राम नमक एवं 50 ग्राम खडिया मिट्टी प्रति दिन प्रति पशु अवश्य खिलायें।
2. गर्भावस्था के अन्तिम 4 महीनों में 2.0 किग्रा अतिरिक्त संतुलित आहार (दाना मिश्रण) दें जिसमें खनिज लवण प्रर्याप्त मात्रा में हो।
3. गर्भावस्था के अन्तिम 4 महीनों में पशुओं को तालाब में अथवा ढलान वाली जगह में चरने के

लिए नही भेजना चाहिए।

4. ब्यांत के लक्षण दिखने पर पशुओं को साफ–सुथरे जगह पर स्थानान्तरित कर देना चाहिए।
5. पशु द्वारा तीन–चार घंटे तक बलपूर्वक जोर लगाने पर भी यदि बच्चा बाहर नही निकलता है तो तुरन्त पशुचिकित्सक से जॉच करानी चाहिए।
6. पशु 10 से 12 घंटे मेंयदि जेर न गिराये तो स्वयं निकालने का प्रयास न करें। पशु चिकित्सक से संपर्क करें।
7. ब्याने के समय पशु के पास घर का कोई सदस्य जरूर उपस्थित रहना चाहिए।

पशुपालक भाईयों को चाहिए कि वे अपने दुधारू पशुओं का गर्भाधान, गर्भधारण एवं ब्यांत के समय विशेश ध्यान रखे, जिससे पशुओं में उक्त समस्यायें एवं बांझपन उत्पन्न न हो और पशु भविश्य के गाय/भैंस को सुगमता पूर्वक जन्म देकर तथा स्वयं भी स्वस्थ्य रहकर अपनी क्षमता के अनुरूप दुग्ध उत्पादन कर सके जिससे दुग्ध उत्पपादन में निरंतरता बनी रहे और पशुपालकों को दुग्ध व्यवसाय में आर्थिक क्षति का सामना न करना पडें।

(पृष्ठ 22 का शेष)

अलग–अलग भूनेगे।

- इन भुनी सामग्रियों को अलग–अलग बारीक पीस लेंगे।
- पिसी सामग्रियों को आटा चलने वाली छलनी से छान लेंगे।
- फिर सभी को अच्छी तरह मिला देंगे और किसी हवा बंद डिब्बे में संग्रहित करेंगे जिससे नमी बिल्कुल ना जाने पाए । पौष्टिक पूरक आहार तैयार है।

इसी प्रकार एक ही अनाज के स्थान पर अनाजों के मिश्रण (गेहूँ+लाई+बाजरा+मक्का+रागी आदि) तथा मूंग की दाल के साथ अरहर, चना आदि दालों को भी थोंडी मात्रा में मिलाकर पूरक आहार की पौष्टिकता को बढाया जा सकता है। मिश्रण को और अधिक पौष्टिक बनाने के लिए उसमें गाजर चुकंदर आदि पौष्टिक सब्जियों के पाउडर को भी मिला सकते हैं। इनका पाउडर बनाने के लिए इन्हें कद्दूकस कर ले और धूप में अच्छी तरह सुखाकर पीस लें। ध्यान रहे किसी ऐसी सब्जी का पाउडर नहीं डालना है जो खाने में कड़वी व बेस्वाद हो। इसी प्रकार हम फलों को सुखाकर उनका पाउडर भी डाल सकते हैं।

इस प्रकार हम उपरोक्त अनुसार पूरक आहार तैयार करके संग्रहित कर रख सकते हैं। जब शिशु को भूख लगे उस समय आवश्यकता अनुसार ये पूरक आहार लेकर उसमें दूध और चीनी मिलाकर गाढा मिश्रण तैयार करें और उसे चम्मच से शिशु को खिलाएं। यदि दूध उपलब्ध न हो तो साफ गुनगुने पानी में भी मिश्रण को तैयार कर सकते हैं। शिशु के रुचि के अनुसार इस मिश्रण में चीनी न डालकर, नमक भी डाल सकते है।

- शिशु को पूरक आहार देना प्रारंभ करते समय ध्यान देने योग्य बातें––
- 6 माह के पश्चात ही शिशु को पूरक आहार देना प्रारंभ करना चाहिए।
- सर्वप्रथम शिशु को तरल पूरक आहार देना प्रारंभ करना चाहिए फिर अर्ध ठोस और सबसे अंत में जब शिशु के दांत निकल जाय तब ठोस पूरक आहार देना प्रारंभ करना चाहिए।
- बच्चे को जबरदस्ती कुछ नहीं खिलाना चाहिए।
- पूरक आहार तभी देना चाहिए जब शिशु भूखा हो अर्थात् माता का दूध पिलाने से पूर्व ही पूरक आहार देना चाहिए
- एक बार में एक ही प्रकार का पूरक आहार खिलाना चाहिए जब बच्चा उसे रुचि से खाने लगे तभी दूसरे प्रकार का आहार खिलाना चाहिए।
- पूरक आहार देने का समय निर्धारित होना चाहिए।
- पूरक आहार के साथ माता का दूध भी देते रहना चाहिए।
- पूरक आहार बनाते समय ध्यान रखना चाहिए कि उसमें अधिक नमक, मिर्च ,तेल ,मसाला आदि न हों।
- पूरक आहार की मात्रा धीरे–धीरे बढ़ानी चाहिए प्रारंभ में एक दो चम्मच आहार दिन में दो बार देना चाहिए , फिर धीरे–धीरे आहार की मात्रा व संख्या बढ़ानी चाहिए नौ महीने का होते–होते होते बच्चे को तीन से चार बार मां के दूध के अतिरिक्त पूरक आहार खिलाना चाहिए। इस प्रकार आहार की व्यवस्था करने पर शिशु में कुपोषण होने की संभावना नहीं रहती है।

सितम्बर माह में किसान भाई क्या करें

फसलों में

डॉ. आर.आर. सिंह
प्राध्यापक (मृदा विज्ञान)

(1) धान में जल भराव की दशा में नीम कोटेड यूरिया का ही प्रयोग करें तथा यूरिया की टॉप ड्रेसिंग के पूर्व खेत से पानी निकाल लें! यदि संभव नहीं हो तो 2.0 प्रतिशत यूरिया घोल का पर्णीय छिड़काव करें।

(2) खैरा रोग की दशा में 5 किग्रा जिंक सल्फेट चूने के पानी के साथ अथवा 2 प्रतिशत यूरिया घोल के साथ पर्णीय छिड़काव करें।

(3) जल भराव वाले क्षेत्रों में सल्फर की कमी के कारण नयी पत्तियां पीली निकलती हैं। सल्फर की कमी पूर्ण करने हेतु 20–30 किग्रा प्रति हे0 की दर से वेंटोनाइट सल्फर या 2 कु0 प्रति हे0 जिप्सम का छिडकाव करें।

(4) तोरिया की बुवाई 15 सितम्बर के बाद मानसून जाने के तुरन्त बाद करें। 4 किग्रा बीज प्रति हे0 की दर से बुवाई करें तथा 20 किग्रा सल्फर का प्रयोग तिलहन में अवश्य करें अथवा फास्फोरस की मात्रा सिंगल सुपर फास्फेट से दें जिससे सल्फर की पूर्ति हो सके।

सब्जी एवं उद्यान में

शशांक शेखर सिंह
विषय वस्तु विशेषज्ञ (उद्यान)

(1) जाड़े एवं बसन्त वाली टमाटर तथा बैंगन की पौध इस माह के प्रथम एवं दूसरे पखवारे में डालें।

(2) मुख्य समय में तैयार होने वाली गोभी की पौध माह के प्रथम सप्ताह में डालें तथा पिछैती एवं मध्यम किस्मों की पौध माह के दूसरे पखवारे में डालें।

(3) अगेती पात गोभी की पौध इस माह के दूसरे पखवारे में डालें।

(4) परवल के तने की रोपाई 1.5 गुणे 1 मीटर के फासले पर 2700 कटिंग प्रति एकड़ के हिसाब से इस माह में भी कर सकते हैं। प्रत्येक कटिंग 90 सेमी की होनी चाहिये।

(5) नये बाग लगाने का यह सर्वोत्तम माह है। पहले से तैयार गड्ढो में पौधों की रोपाई करें। यदि पहले से गड्ढे नहीं तैयार किये गये हैं तो आम, आँवला, बेर के लिये 75 सेमी व्यास तथा इतने ही गहराई के गड्ढे खोदकर खाद एवं मिट्टी की समान मात्रा भरकर पौधे रोपित कर सकते हैं।

(6) पुराने बागों की एक अच्छी जुताई कर दें, जिससे गिरी हुई पत्तियाँ एवं अन्य कूड़ा करकट सड़ सकें और खर–पतवार नष्ट हो सके।

(7) आम, अमरूद, बेर, आँवला, कटहल आदि का प्रबन्ध कलम चश्मा विधि द्वारा इस माह के प्रथम सप्ताह तक पूरा कर लें।

फसल सुरक्षा

डॉ. वी. पी. चौधरी एवं डॉ. पंकज कुमार
सहायक प्राध्यापक (पादप रोग)

(1) धान में खैरा रोग के नियंत्रण के लिए 5 किग्रा जिंक सल्फेट तथा 20 किग्रा यूरिया अथवा 2.5 किग्रा बुझे हुए चूने को 800–1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

(2) धान की फसल में कीटों के नियंत्रण के लिए फास्फेमेडान 250–300 मिली प्रति हेक्टेयर 800 से 1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

(3) मक्का में तुलसिता रोग के नियंत्रण के लिए जिंक कार्बोमेट रसायन 2 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से 800–1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

(4) तिलहनी फसलों में पर्ण चित्ती तथा जीवाणु झुलसा रोग नियंत्रण के लिये जिंक कार्वामेट रसायन 2 किग्रा तथा स्ट्रेप्टोसाइक्लिन 15 ग्राम अथवा एग्रीमाइसीन 100 (75 ग्राम) को 800–1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें।

(5) धान में तना छेदक के नियंत्रण के लिये कार्बोफ्यूरॉन 3 जी 3–5 सेमी खड़े पानी में 20 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में बिखेर दें अथवा फास्फेमिडान 85 ईसी 500 मिली को 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

(6) हरा, सफेद एवं भूरा फुदका के नियंत्रण के लिये फास्फेमिडान 85 ईसी 500 मिली को 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

(7) धान में जीवाणु झुलसा बीमारी लगने पर खेत का पानी निकाल कर 15 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लीन व कापर आक्सीक्लोराइड 500 ग्राम को 1000 लीटर पानी में घोल कर प्रति हेक्टेयर की दर से 2–3 छिड़काव 10–15 दिन के अन्तराल पर करें।

(8) धान में झोंका रोग नियंत्रण हेतु कार्बेन्डाजिम 1 किग्रा या एडिफेनफास 1 लीटर को 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

संकलनकर्ता : डॉ. आर.आर. सिंह, प्राध्यापक, प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

(9) बैंगन की फसल को तना व फलीबेधक कीट हानि पहुँचाता है। रोगग्रस्त भाग को काट देना चाहिये तथा प्रभावित कटे भाग को जला देना चाहिये। फेनवालरेट 20 ईसी 750 मिली या डिलमेथरिन 28 ईसी 450 मिली या साइपरमेथरीन 10 ईसी 750 मिली को 800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

पशुपालन

डॉ. एस.एन. लाल

सह प्राध्यापक (पशु विज्ञान)

(1) भैंसों में ब्यांत का समय चल रहा है अतः नवजात पड़वा/पड़िया को भैंस का प्रथम दूध खींस तीन दिन तक अवश्य पिलाएं। इसमें बच्चों में विभिन्न प्रकार की बीमारियों से बचाव की सम्भावना बढ़ जाती है।

(2) पशुओं को जहरी बुखार, लंगड़िया तथा गलाघोंटू बीमारी का टीका यदि अभी तक न लगा हो तो इस माह में अवश्य लगवा दें।

(3) मुर्गियों से अधिक अण्डा व मांस उत्पादन के लिए उन्हें बहुत दिनों का पुराना दाना नहीं देना चाहिए, क्योंकि बरसात के मौसम में दानें में फफूँदी लगने की सम्भावना अधिक रहती है।

(4) गर्भवती भैंस को पौष्टिक दलहनी चारा के अतिरिक्त खनिज लवण एवं विटामिन युक्त आहार दें।

(5) ब्रायलर मुर्गियों के प्रबन्धन पर विशेष ध्यान रखें। बरसात में बिछावन गीला होने की सम्भावना अधिक होती है। अतः समय–समय पर गुड़ाई करके बिछावन गीला होने से बचायें।

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के

प्रश्न : मोथा घास का निदान कैसे करें?

(श्री इन्द्र देव वर्मा, ग्राम तारून, जनपद अयोध्या)

उत्तर : मोथा घास के नियंत्रण के लिये खेत की ग्रीष्मकालीन 2–3 बार जुताई करें। खरीफ में धान उगाने के लिये लेवा करके अंकुरित बीज बोयें अथवा पौध रोपें। धान, मक्का, गन्ना, ज्वार तथा बाजरा की शुद्ध फसल में संस्तुति के अनुसार 2,4– डी शाकनाशी का प्रयोग करें। वर्षा और ग्रीष्मकाल में सघन उगने वाली और जल्दी बढ़ने वाली फसलें लगाना अच्छा होगा। प्रत्येक फसल में बुवाई के बाद 15–20 दिन की अवस्था पर पहली निराई तथा इतने ही अन्तराल पर दूसरी निराई अवश्य करें। बाद की निराई आवश्यकतानुसार करें। निराई–गुड़ाई के समय इस घास को समूल निकालकर नष्ट कर दें। बिरल या अधिक फासले पर लगाई जाने वाली फसलों में गन्ने की पत्ती, पुआल अथवा जलकुम्भी बिछाने से बहुत अच्छे परिणाम मिले हैं। गेहूँ, धान आदि फसल की एक माह की अवस्था पर वासाग्रान 2 लीटर प्रति हेक्टेयर 500–600 लीटर पानी में घोलकर छिड़कने से मोथा के साथ–साथ अन्य दूसरी घासें भी नष्ट हो जाती हैं।

प्रश्न : बैंगन की पौध को कीड़े पत्तियाँ एवं डण्ठल काट रहें हैं, इसकी रोकथाम कैसे करें?

(श्री राम सुमिरन, ग्राम हसनपुर, जनपद अमेठी)

उत्तर : बैंगन में तना छेदक एवं फल छेदक कीड़े लगे हैं। इस कीड़े के आक्रमण करने के पहले ही उपाय करना चाहिये, क्योंकि यह कीड़ा जब अन्दर घुस जाता है तो दवा असर नहीं करती है। अतः कीड़े लगने से पहले ही छिड़काव करना चाहिये। इसके नियंत्रण के लिये 2 मिली मैलाथियान को एक लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिये अथवा फास्फेमिडान 100 ईसी 250 मिली प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें।

प्रश्न : मुर्गीपालन प्रारम्भ करना चाहते हैं, कैसे करें?

(श्री मो. इरफान, जगदीशपुर, जनपद अमेठी)

उत्तर : मुर्गीपालन दो प्रकार से किया जाता है एक अण्डा उत्पादन के लिये, दूसरा मांस (ब्रायलर) उत्पादन। अण्डा उत्पादन हेतु सबसे अच्छी नस्ल ह्वाइट लेगहार्न पायी जाती है जो वर्ष भर में लगभग 280–300 अण्डे का उत्पादन करती है। इसके लिये बिछावन पद्धति और केज पद्धति से मुर्गियों को पाला जाता है। दूसरा ब्रायलर पालन जिसे पूर्वांचल में बहुत से किसानों द्वारा किया जा रहा है। यह बहुत कम समय में अर्थात 25–30 दिन में 1200–1500 ग्राम वजन तक हो जाता है जिसे बाजार के आवश्यकता अनुसार छोटा अथवा बड़ा करके बेच दिया जाता है। ब्रायलर पालन के लिये जहाँ मुर्गी घर बनाना है वह जगह ऊँचा होना चाहिये, पानी न रूकता हो, बाजार के नजदीक तथा आने जाने के लिय सड़क होना आवश्यक है। एक ब्रायलर के लिए एक वर्गफुट स्थान की जरूरत पड़ती है जिसे अच्छे प्रबन्धन एवं संतुलित आहार खिलाकर कम समय में अधित लाभ प्राप्त किया जा सकता है। अधिक जानकारी के लिये आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज के कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र पर आकर सम्पर्क कर सकते हैं।

पंजीयन संख्या - 54461/91

डाक पंजीयन संख्या एल. डब्लू./एन.पी. 34

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

द्वारा

कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र

के अन्तर्गत प्रकाशित ग्रामोपयोगी पुस्तकें

पुस्तक	मूल्य रु.
आधुनिक मधुमक्खी पालन एवं प्रबन्ध	20.00
जिमीकन्द की खेती	15.00
मशरूम उत्पादन एवं उपयोगिता	12.00
किसानोपयोगी फसल सुरक्षा तकनीक	50.00
फसल उत्पादन तकनीक	35.00
जीरो टिल सीड कम फर्टी ड्रिल	10.00
फल–सब्जी परीरक्षण एवं मानव आहार	50.00
गन्ने की आधुनिक खेती	15.00
जीरो टिलेज गेहूँ बुवाई की एक विश्वसनीय तकनीक	20.00
केचुआ पालन (वर्मीकल्चर) एवं वर्मी कम्पोस्ट उत्पादन	10.00
व्यावसायिक कुक्कुट (ब्रायलर) उत्पादन	20.00
फसलों के सूत्रकृमि रोग एवं उनका वैज्ञानिक प्रबन्धन	25.00
आय संवर्धन हेतु प्रमुख सब्जियों की उत्पादन तकनीक	25.00
गृहणियों के लिए बेकिंग कला	25.00
स्वच्छ दूध उत्पादन तकनीक एवं उसका महत्व	20.00
गायों एवं भैसों के मुख्य रोग, टीकाकरण एवं संतुलित पशु आहार	20.00
मछली पालन	40.00
फसल अवशेष प्रबंधन	30.00

प्रति रूपये 25/–मात्र

मुद्रित

सेवा में,
श्री/श्रीमती

प्रेषक:
प्रसार निदेशालय
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या की ओर से प्रो. ए.पी. राव निदेशक प्रसार द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित